॥ श्रीहरिः ॥

1367

श्रीसत्यनारायण-व्रतकथा

(श्रीविष्णुसहस्त्रनामस्तोत्रसहित)

गीताप्रेस, गोरखपुर
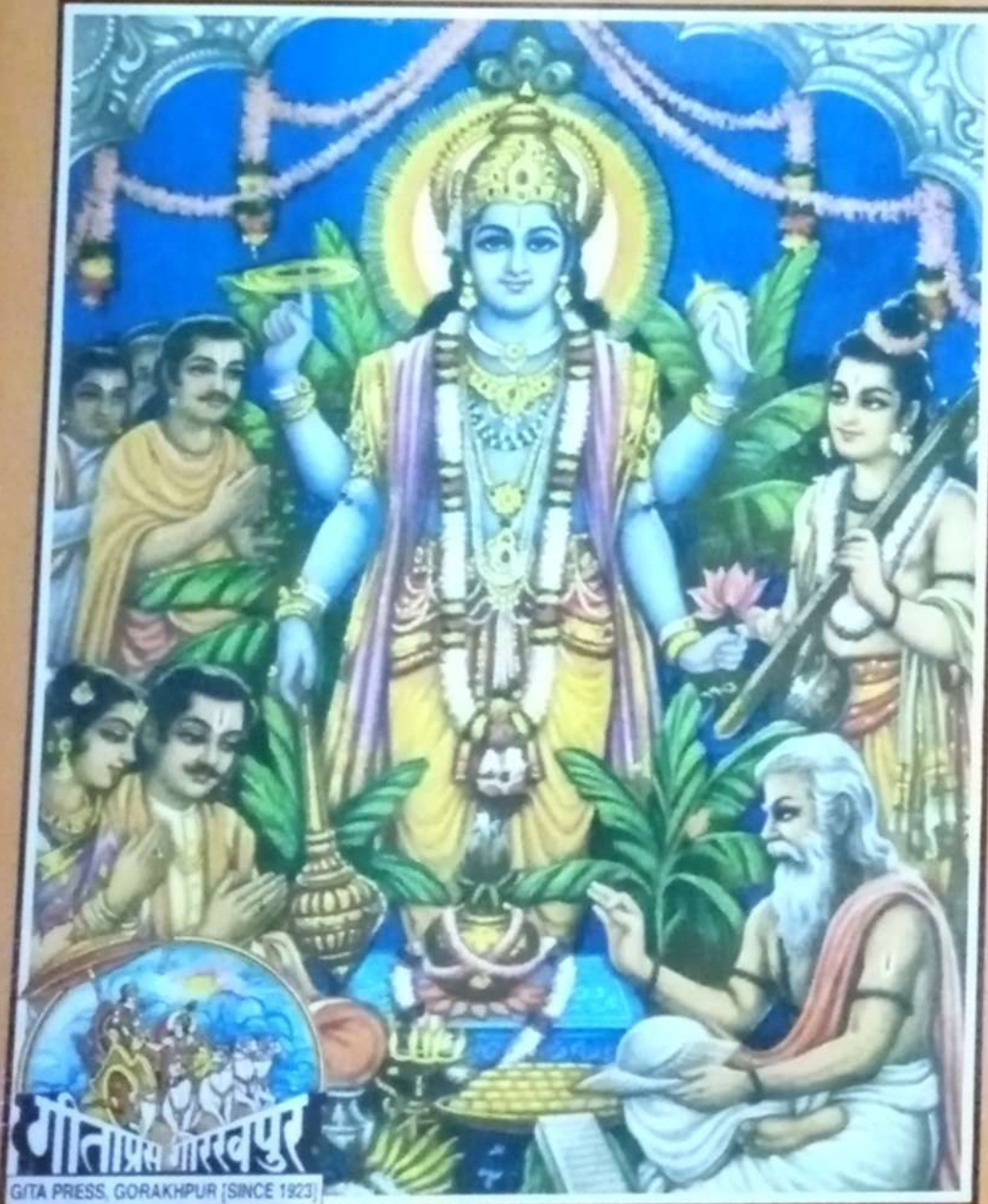
॥ श्रीहरि: ॥

प्राक्कथन

'सत्यं परं धीमहि' सत्यस्वरूप परमात्माका मैं ध्यान करता हूँ। सत्यस्वरूप भगवान् नारायण ही सत्यनारायण हैं। सत्यधर्मके प्रतिष्ठाहेतु उन्होंने सत्यनारायणका अवतार धारण किया और सत्यकी महिमा स्थापित की। इस सम्बन्धमें भगवान्ने जो लीला की, वह 'सत्यनारायण-कथा' अथवा 'सत्य-व्रत-कथा' के नामसे लोकमें प्रचलित हो गयी। यह कथा-श्रवण अत्यन्त लोकप्रिय है और जनता-जनार्दनमें इसका प्रचार-प्रसार भी सर्वाधिक है। भारतीय सनातन परम्परामें किसी भी मांगलिक कार्यका प्रारम्भ भगवान् गणपतिके पूजनसे एवं उस कार्यकी पूर्णता भगवान् सत्यनारायणके कथा-श्रवणसे समझी जाती है। कथाके माध्यमसे इसमें मूल सत्-तत्त्व परमात्माका ही प्रतिपादन हुआ है और सत्यके व्यवहारद्वारा नारायणकी उपासनाका मार्ग निर्दिष्ट हुआ है।

अन्त:करणकी निर्मलता तथा निश्छल भावसे भगवान्की भक्तिका मार्ग प्रशस्त होता है। भगवान्को ऐसे ही भक्त विशेष प्रिय हैं। मनसि अन्यत्, वचसि अन्यत् और कर्मणि अन्यत्—यह छद्म कल्याण-मार्गका सर्वोपरि बाधक है, अत: सब प्रकारसे एक रहते हुए विशुद्ध भावसे ही भगवान्की आराधना करनी चाहिये और ऐसी ही आराधना नरको नारायण बना देती है—यही मूल बात इस 'सत्यनारायण-कथा' से मुखरित होती है। सत्यकी ही सर्वदा विजय होती है, असत्यकी नहीं—**'सत्यमेव जयति नानृतम्'** यह इस कथाका मूल संदेश है।

कथामें संक्षेपमें यह बताया गया है कि अति निर्धन विप्रद्वारा सत्यका संकल्प करके उस प्रतिज्ञाका पालन करनेसे उसे भगवान्की प्राप्ति हो गयी, यही स्थिति काष्ठविक्रेताकी भी हुई। इसके विपरीत साधु वणिक्ने अपनी प्रतिज्ञाका

पालन नहीं किया, छद्म व्यवहार किया, अन्तर्यामी भगवान्‌से असत्य भाषण किया; फलतः उसकी तथा उसके परिवारकी अत्यन्त दुर्गति हुई, पुनः उसने करुणामय भगवान्‌की शरण ग्रहण की तो उसका सर्वविध अभ्युदय हो गया। उसे वैकुण्ठकी प्राप्ति हुई। इन दृष्टान्तोंद्वारा हमें भगवान्‌के सत्-मार्गके अनुपालनकी प्रेरणा प्राप्त होती है। इन सब कारणोंसे सत्य अथवा सत्यनारायणकी महिमापरक यह व्रत-कथा बहुत ही लोकप्रिय है।

इसके साथ ही अनेक शंका-समाधान भी इसपर होते रहते हैं तथा लोग यह भी पूछते हैं कि साधु वणिक्, काष्ठविक्रेता, शतानन्द ब्राह्मण, उल्कामुख, तुंगध्वज आदि राजाओंने कौन-सी कथाएँ सुनी थीं और वे कथाएँ कहाँ गयीं तथा इस कथाका प्रचार कबसे हुआ? वास्तवमें यहाँ मूलरूपमें भगवान् सत्यनारायणके व्रत एवं पूजनका ही विधान है। भगवान्‌की लीला-कथाएँ अनन्त हैं और उनकी श्रवण-परम्परा भी सनातन ही है। यह कथा व्रत-पूजन-महिमापरक है, जो सर्वप्रथम काशीमें सुनी गयी, यह बात मूल कथासे परिलक्षित होती है—**'कश्चित् काशीपुरे रम्ये ह्यासीद् विप्रोऽतिनिर्धनः॥'** व्रत एवं पूजनकी पूर्णताके लिये भगवान्‌की कथाका भी श्रवण करना चाहिये। पूर्वमें ब्राह्मण और साधु वणिक्‌ने भी व्रत-पूजनके साथ भगवान्‌की लीला-कथाका श्रवण किया था। वस्तुतः भगवान्‌की लीला-कथा सच्चिदानन्दस्वरूप ही है। विशेषरूपसे इस सम्बन्धमें यही जानना चाहिये कि कथाके माध्यमसे मूल सत्-तत्त्व परमात्माका ही इसमें निरूपण हुआ है, जिसके लिये गीता (२। १६)-में—**'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः'** आदि शब्दोंसे यह स्पष्ट किया गया है कि इस मायामय दुःखद संसारकी वास्तविक सत्ता ही नहीं है। परमेश्वर ही त्रिकालाबाधित सत्य है और एकमात्र वही ज्ञेय, ध्येय एवं उपास्य है। ज्ञान-वैराग्य और अनन्य

भक्तिके द्वारा वही साक्षात्कार करनेके योग्य है। श्रीमद्भागवत (१०।२।२६)-में भी कहा गया है—

सत्यव्रतं सत्यपरं त्रिसत्यं
सत्यस्य योनिं निहितं च सत्ये।
सत्यस्य सत्यमृतसत्यनेत्रं
सत्यात्मकं त्वां शरणं प्रपन्नाः॥

'प्रभो! आप सत्यसंकल्प हैं। सत्य ही आपकी प्राप्तिका श्रेष्ठ साधन है। सृष्टिके पूर्व, प्रलयके पश्चात् और संसारकी स्थितिके समय—इन असत्य अवस्थाओंमें भी आप सत्य हैं। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश—इन पाँच दृश्यमान सत्योंके आप ही कारण हैं और उनमें अन्तर्यामीरूपसे विराजमान भी हैं। आप इस दृश्यमान जगत्के परमार्थस्वरूप हैं। आप ही मधुरवाणी और समदर्शनके प्रवर्तक हैं। भगवन्! आप तो बस सत्यस्वरूप ही हैं। हम सब आपकी शरणमें आये हैं।'

यहाँ भी सत्यव्रत और सत्यनारायणव्रतका तात्पर्य उन शुद्ध सच्चिदानन्द परमात्मासे ही है। इसी प्रकार निम्नलिखित श्लोकमें—

अन्तर्भवेऽनन्त भवन्तमेव
ह्यतत्त्यजन्तो मृगयन्ति सन्तः।
असन्तमप्यन्त्यहिमन्तरेण
सन्तं गुणं तं किमु यन्ति सन्तः॥

(श्रीमद्भा० १०।१४।२८)

—संसारमें मनीषियोंद्वारा सत्-तत्त्वकी खोजकी बात निर्दिष्ट है, जिसे प्राप्तकर मनुष्य सर्वथा कृतार्थ हो जाता है और सभी आराधनाएँ उसीमें पर्यवसित होती हैं। निष्काम-उपासनासे सत्यस्वरूप नारायणकी प्राप्ति हो जाती है।

वर्तमानमें भगवान् सत्यनारायणकी 'व्रत-कथा' 'स्कन्दपुराण' के रेवाखण्डके नामसे प्रसिद्ध है, जो पाँच या सात अध्यायोंमें उपलब्ध है। ऐसी ही एक कथा 'भविष्यपुराण' में भी उपलब्ध है, जो छः अध्यायोंमें है। यहाँ पाँच अध्यायोंमें उपनिबद्ध कथाका आश्रय लिया गया है तथा उसे सरल एवं सुगमरूपसे समझनेके लिये हिन्दी भावानुवाद भी साथमें दिया गया है। कथाके प्रारम्भमें गणपति आदि देवों तथा भगवान् सत्यनारायणका षोडशोपचार-पूजन और कथाके अनन्तर संक्षिप्त हवन-विधि एवं उत्तर-पूजन भी दिया गया है। भगवान् विष्णुके नाम-स्मरणसे सम्पूर्ण विघ्न-बाधाओं और त्रुटियोंका निवारण हो जाता है, इसी दृष्टिसे 'श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्र' का मूल पाठ भी अन्तमें दे दिया गया है।

श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूजन, कथा-श्रवण एवं प्रसाद-ग्रहण आदिके द्वारा उन सत्यस्वरूप परब्रह्म परमात्मा भगवान् सत्यनारायणकी उपासनासे लाभ उठाते हुए अपने जीवनमें सत्यकी मर्यादाको स्थापित करनेका व्रत लेना चाहिये। इसी उद्देश्यसे इस 'श्रीसत्यनारायणव्रतकथा' का प्रकाशन किया जा रहा है। आशा है, जनता-जनार्दन इस कथासे लाभान्वित होंगे।

—राधेश्याम खेमका

□□

॥ श्रीहरि: ॥

॥ देव-पूजन ॥

श्रीसत्यनारायण-पूजन तथा कथा-श्रवण अत्यन्त पवित्र, पुण्यप्रद और समस्त मंगलोंको प्रदान करनेवाला है। बड़े ही उत्साह एवं श्रद्धा-भक्तिसे समन्वित होकर इसका अनुष्ठान करना चाहिये। इससे जीवनमें सत्यकी प्रतिष्ठा स्थापित होती है और भगवान्‌की विशेष कृपा भी प्राप्त हो जाती है।

पूजन तथा कथा-श्रवण आदिके लिये किसी पवित्र स्थानमें, देवस्थानमें अथवा घरमें सुन्दर मण्डप बनाकर उसे अनेक प्रकारसे अलंकृत करना चाहिये। चारों ओर भगवान्‌के सुन्दर विग्रहोंको लगाना चाहिये। मण्डपके मध्यमें भगवान् सत्यनारायण (श्रीविष्णु भगवान् या शालग्रामशिला)-के लिये एक सिंहासन लगाकर उसपर भगवान्‌के विग्रहको प्रतिष्ठित करना चाहिये। यथासम्भव केलेके स्तम्भोंसे मण्डपको मण्डित करना चाहिये और भगवती तुलसी देवी (तुलसी वृक्ष)-को भी वहाँ स्थापित करना चाहिये।

भगवान् सत्यनारायणके पूजन तथा कथा-श्रवणसे पूर्व कार्यकी निर्विघ्नतापूर्वक सम्पन्नताके लिये प्रारम्भमें भगवान् गणेश-गौरी, कलश, नवग्रह आदिका पूजन भी करना चाहिये। अत: उसे भी यहाँ संक्षेपमें दिया जा

रहा है।[१] पूजनमें यथाशक्ति संक्षेप-विस्तार भी किया जा सकता है।[२]

सर्वप्रथम पूजन आदिकी समस्त सामग्रीको यथास्थान रख ले और पवित्र होकर पवित्र आसनपर पूर्व दिशाकी ओर मुख करके बैठ जाय, रक्षा-दीप जलाकर पूर्वाभिमुख रख ले, तदनन्तर निम्न मन्त्रोंसे तीन बार आचमन करे—

केशवाय नमः। नारायणाय नमः। माधवाय नमः।

आचमनके पश्चात् दाहिने हाथके अँगूठेके मूलभागसे '**हृषीकेशाय नमः, गोविन्दाय नमः**' कहकर ओठोंको पोंछकर हाथ धो ले।

आचमनके पश्चात् पवित्री धारण करे और प्राणायाम करके अपने बायें हाथमें जल लेकर दाहिने हाथसे उसे अपने ऊपर तथा पूजा-सामग्रीपर निम्न मन्त्रसे छिड़के—

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

---

१. यहाँ गणेश-गौरी, कलश, षोडशमातृका, सप्तघृतमातृका तथा नवग्रहोंका पूजन नाममन्त्रसे दिया गया है। विस्तृत विधिके लिये 'गीताप्रेस' से प्रकाशित 'नित्यकर्म-पूजाप्रकाश' ग्रन्थ देखा जा सकता है।

२. जो व्यक्ति संक्षेपमें केवल कथा-श्रवण करना चाहते हैं, वे गणेश-गौरीकी संक्षिप्त पूजाकर भगवान् शालग्राम अथवा (जो शालग्रामपूजाके अधिकारी नहीं हैं, वे) सत्यनारायण भगवान्के चित्र या प्रतिमाकी सविधि पूजाकर कथा-श्रवण करते हैं।

पुण्डरीकाक्षः पुनातु, पुण्डरीकाक्षः पुनातु, पुण्डरीकाक्षः पुनातु।

यदि गणेश और अम्बिकाकी मूर्ति न हो तो किसी पात्रमें अष्टदल कमल बनाकर सुपारीमें मौली लपेटकर अक्षतपुंजयुक्त पात्रपर उसे स्थापित कर ले और हाथमें अक्षत तथा पुष्प लेकर आगे दिया वैदिक स्वस्त्ययन पढ़े—

स्वस्त्ययन

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानो विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह॥ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पञ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥ यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु। शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः॥ सुशान्तिर्भवतु॥

श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। उमामहेश्वराभ्यां नमः। वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। शचीपुरन्दराभ्यां नमः। मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। इष्टदेवताभ्यो नमः। कुलदेवताभ्यो नमः। ग्रामदेवताभ्यो नमः। वास्तुदेवताभ्यो नमः। स्थानदेवताभ्यो नमः। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नमः।

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
सङ्ग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥

अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥
वक्रतुण्ड महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः॥

हाथमें लिये हुए अक्षत-पुष्पको गणेश और अम्बिकापर चढ़ा दे।

प्रधान संकल्प

हाथमें जल, अक्षत, पुष्प एवं द्रव्य लेकर संकल्प करे—

(क) सकाम—ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे बौद्धावतारे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते अमुकक्षेत्रे विक्रमशके षष्ट्यब्दानां

मध्ये अमुकनामसंवत्सरे अमुकायने अमुक-ऋतौ महामाङ्गल्यप्रदमासोत्तमे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे एवं ग्रहगणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः अमुकोऽहं (सपत्नीकः) ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थमप्राप्तलक्ष्मीप्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकालसंरक्षणार्थं सकलेप्सितकामनासिद्ध्यर्थं कायिकवाचिकमानसिकसकलदुरितोपशमनार्थं तथा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं विशेषतः भगवत्प्रीत्यर्थं श्रीसत्यनारायणस्य पूजनकथाश्रवणाख्यं कर्म करिष्ये। (संकल्पका जल छोड़ दे।)

पुनर्जलमादाय (पुनः जल-अक्षत लेकर गणपति आदिके पूजनका संकल्प करे—) **तदङ्गत्वेन कार्यस्य निर्विघ्नता-सिद्ध्यर्थमादौ गौरीगणेशयोः पूजनम्, कलशाराधनं तथा च नवग्रहादिदेवानां नाममन्त्रैः पूजनमहं करिष्ये।**

(हाथमें लिये हुए जल-अक्षतादिको छोड़ दे।)

(ख) निष्काम—ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः से **अमुकोऽहं** तक पहले संकल्पके समान बोलकर आगे केवल इतना ही बोले—**भगवत्प्रीत्यर्थं श्रीसत्यनारायणस्य पूजनकथाश्रवणाख्यं च कर्म करिष्ये।**

(संकल्पका जल छोड़ दे।)

पुनर्जलमादाय (पुनः जल-अक्षत लेकर गणपत्यादि-पूजनका संकल्प करे—) **तदङ्गत्वेन कार्यस्य निर्विघ्नता-सिद्ध्यर्थमादौ गौरीगणेशयोः पूजनम्, कलशाराधनं तथा च नवग्रहादिदेवानां नाममन्त्रैः पूजनमहं करिष्ये।**

* गणपति और गौरीकी पूजा *

हाथमें अक्षत लेकर ध्यान और आवाहन करे—

भगवान् गणेशका ध्यान—

गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपङ्कजम्॥

भगवती गौरीका ध्यान—

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्॥

भगवान् गणेशका आवाहन—

एह्येहि हेरम्ब महेशपुत्र समस्तविघ्नौघविनाशदक्ष।
माङ्गल्यपूजाप्रथमं प्रधानं गृहाण पूजां भगवन् नमस्ते॥

सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः। गणपतिमावाहयामि। आवाहनार्थे अक्षतान् समर्पयामि। (हाथमें लिये अक्षतको गणेशजीपर चढ़ा दे। पुनः अक्षत लेकर गणेशजीकी दाहिनी ओर गौरीजीका आवाहन करे।)

भगवती गौरीका आवाहन—

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शङ्करप्रियाम्।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्॥

गौर्यै नमः। गौरीमावाहयामि। आवाहनार्थे अक्षतान् समर्पयामि। (हाथके अक्षतको गौरीजीपर चढ़ा दे।)

प्रतिष्ठा—हाथमें अक्षत लेकर '**गणेशाम्बिके सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेताम्। प्रतिष्ठापूर्वकम् आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि गणेशाम्बिकाभ्यां नमः।**' (बोलकर प्राणप्रतिष्ठा करते हुए आसनके लिये अक्षत समर्पित करे।)

पाद्य—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। पादयोः पाद्यं समर्पयामि। (जल चढ़ाये।)

अर्घ्य—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि। (जल चढ़ाये।)

आचमन—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनीसे जल चढ़ाये।)

स्नान—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। स्नानीयं जलं समर्पयामि। (जलसे स्नान कराये।)

पुनराचमन—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। पुनराचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनीसे पुनः जल चढ़ाये।)

पञ्चामृतस्नान—यदि सम्भव हो तो गायके दूध, दही, घी, मधु तथा शर्करासे पृथक्-पृथक् स्नान कराये। पंचामृत बनाकर एक साथ भी स्नान कराया जा सकता है, एक साथ स्नान करानेका मन्त्र इस प्रकार है—

पयो दधि घृतं चैव मधुशर्करयान्वितम्।
पञ्चामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि। (पंचामृतसे स्नान कराये।)

शुद्धोदक-स्नान—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। (शुद्ध जलसे स्नान कराये और अंग-प्रोक्षण कर गणेश तथा अम्बिकाको यथास्थान विराजित करे।)

आचमन—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (शुद्धोदक-स्नानके बाद आचमनके लिये जल दे।)

वस्त्र-उपवस्त्र—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि। आचमनीयं जलं समर्पयामि। (गणेश तथा अम्बिकाजीको वस्त्र अथवा रक्तसूत्र अर्पित करे और आचमनके लिये जल दे।)

यज्ञोपवीत—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। यज्ञोपवीतं समर्पयामि। आचमनीयं जलं समर्पयामि। (यज्ञोपवीत चढ़ाये तथा आचमनके लिये जल दे।)

चन्दन—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। चन्दनानुलेपनं समर्पयामि। (चन्दन लगाये। गौरीजीको लाल रोली लगाये।)

अक्षत—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। अक्षतान् समर्पयामि। (अक्षत चढ़ाये।)

पुष्प-पुष्पमाला—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। पुष्पं पुष्पमालां च समर्पयामि। (गौरी और गणेशको पुष्प तथा पुष्पमालाओंसे अलंकृत करे।)

दूर्वा—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। दूर्वांकुरान् समर्पयामि। (दूर्वांकुर चढ़ाये।)

सिन्दूर—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। सिन्दूरं सौभाग्यद्रव्यं च समर्पयामि। (सिन्दूर तथा सौभाग्यद्रव्य चढ़ाये।)

सुगन्धिद्रव्य—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। सुगन्धिद्रव्याणि समर्पयामि। (सुगन्धिद्रव्योंसे गणेश और अम्बिकाको सुवासित करे।)

धूप—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। धूपमाघ्रापयामि। (धूप दिखाये।)

दीप—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। दीपं दर्शयामि। (दीप दिखाये।)

'हृषीकेशाय नमः।' (कहकर हाथ धो ले।)

नैवेद्य—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। नैवेद्यं निवेदयामि। (नैवेद्य निवेदित करे और उसमें दूर्वा तथा पुष्प छोड़कर भोग लगाये फिर आचमनीय जल अर्पित करे।)

ऋतुफल—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। ऋतुफलं समर्पयामि। (फल चढ़ाये तथा आचमनके लिये जल दे।)

करोद्वर्तन—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। करोद्वर्तनार्थे चन्दनं समर्पयामि। (करोद्वर्तनके लिये चन्दन चढ़ाये।)

ताम्बूल—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। मुखवासार्थे एलालवंगपूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि। (इलायची, लौंग, सुपारीके साथ ताम्बूल चढ़ाये।)

दक्षिणा—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि। (दक्षिणा चढ़ाये।)

पुष्पाञ्जलि— नाना सुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि। (हाथमें लिये पुष्प अर्पित करे।)

विशेषार्घ्य—एक ताम्रपात्रमें जल, चन्दन, अक्षत, फल, फूल, दूर्वा और दक्षिणा रखकर अर्घ्यपात्र बना ले तथा उसे दोनों हाथमें लेकर निम्न मन्त्र पढ़े—

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्॥
द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो।
वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद॥
अनेन सफलार्घ्येण वरदोऽस्तु सदा मम।

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। विशेषार्घ्यं समर्पयामि। (विशेषार्घ्य अर्पित करे।)

प्रार्थना—हाथमें पुष्प लेकर इस प्रकार प्रार्थना करे—

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते॥

सिन्दूर—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। सिन्दूरं सौभाग्यद्रव्यं च समर्पयामि। (सिन्दूर तथा सौभाग्यद्रव्य चढ़ाये।)
सुगन्धिद्रव्य—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। सुगन्धिद्रव्याणि समर्पयामि। (सुगन्धिद्रव्योंसे गणेश और अम्बिकाको सुवासित करे।)
धूप—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। धूपमाघ्रापयामि। (धूप दिखाये।)
दीप—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। दीपं दर्शयामि। (दीप दिखाये।)
'हृषीकेशाय नमः।' (कहकर हाथ धो ले।)
नैवेद्य—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। नैवेद्यं निवेदयामि। (नैवेद्य निवेदित करे और उसमें दूर्वा तथा पुष्प छोड़कर भोग लगाये फिर आचमनीय जल अर्पित करे।)
ऋतुफल—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। ऋतुफलं समर्पयामि। (फल चढ़ाये तथा आचमनके लिये जल दे।)
करोद्वर्तन—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। करोद्वर्तनार्थे चन्दनं समर्पयामि। (करोद्वर्तनके लिये चन्दन चढ़ाये।)
ताम्बूल—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। मुखवासार्थे एलालवंगपूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि। (इलायची, लौंग, सुपारीके साथ ताम्बूल चढ़ाये।)
दक्षिणा—गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि। (दक्षिणा चढ़ाये।)
पुष्पाञ्जलि— नाना सुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि। (हाथमें लिये पुष्प अर्पित करे।)

विशेषार्घ्य—एक ताम्रपात्रमें जल, चन्दन, अक्षत, फल, फूल, दूर्वा और दक्षिणा रखकर अर्घ्यपात्र बना ले तथा उसे दोनों हाथमें लेकर निम्न मन्त्र पढ़े—

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्॥
द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो।
वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद॥
अनेन सफलार्घ्येण वरदोऽस्तु सदा मम।

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। विशेषार्घ्यं समर्पयामि। (विशेषार्घ्य अर्पित करे।)

प्रार्थना—हाथमें पुष्प लेकर इस प्रकार प्रार्थना करे—

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते॥

भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते॥
त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति
भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति।
विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव॥
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः॥

गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। प्रार्थनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि। (पुष्प अर्पित कर दे और साष्टांग प्रणाम करे।)

समर्पण—हाथमें जल लेकर **'गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। अनया पूजया गणेशाम्बिके प्रीयेताम्, न मम'**—बोलकर समस्त पूजन-कर्म तथा जल भगवान्‌को समर्पित कर दे और पुनः नमस्कार करे। ❑❑

* कलश-पूजन *

कलशपर रोलीसे 'स्वस्तिक' का चिह्न बनाकर उसके गलेमें तीन धागेवाली मौली लपेट दे। कलश स्थापित की जानेवाली भूमि अथवा पाटेपर कुंकुम या रोलीसे अष्टदल कमल बनाकर '**भूम्यै नमः**' कहकर भूमिका स्पर्श करे। उस पूजित भूमिपर सप्त धान्य (जौ, धान, तिल, कँगनी, मूँग, चना तथा साँवा) अथवा गेहूँ, चावल या जौ रखकर उसपर कलश स्थापित करे।

उस स्थापित कलशमें जल डाल दे। तदनन्तर कलशमें यथोपलब्ध सामग्री—चन्दन, सर्वौषधि (मुरा, जटामाँसी, वच, कुष्ठ, शिलाजीत, हल्दी, दारुहल्दी, सठी, चम्पक तथा मुस्ता), दूब, पंचपल्लव (बरगद, गूलर, पीपल, आम तथा पाकड़के नये और कोमल पत्ते), कुश (पवित्री), सप्तमृत्तिका*, सुपारी, पंचरत्न (सोना, हीरा, मोती, पद्मराग और नीलम) तथा द्रव्य भी छोड़े।

कलशको वस्त्रसे अलंकृत करे तथा कलशके ऊपर चावलसे भरे पूर्णपात्रको रखे और उसपर लाल कपड़ेसे वेष्टित नारियलको भी रखे। नारियलके अभावमें सुपारी अथवा फल रखे।

---

*-घुड़साल, हाथीसाल, बाँबी, नदियोंके संगम, तालाब, राजाके द्वार और गोशाला—इन सात स्थानोंकी मिट्टीको सप्तमृत्तिका कहते हैं।

* कलशमें देवताओंका आवाहन *

उस कलशमें सर्वप्रथम जलके अधिपति वरुणदेवका '**अपां पतये वरुणाय नमः**' ऐसा कहकर आवाहन करे और अक्षत तथा पुष्प कलशमें छोड़ दे। तदनन्तर अन्य देवी-देवताओंका हाथमें अक्षत तथा पुष्प लेकर निम्न मन्त्र पढ़ते हुए आवाहन करे—

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः॥
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः॥
अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।
अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा॥
आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः।
गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् संनिधिं कुरु॥
सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः॥

(हाथके अक्षत-पुष्प कलशपर चढ़ा दे।)

प्रतिष्ठा—**'कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु। वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः'** कहकर अक्षत-पुष्प छोड़ते हुए कलशकी प्रतिष्ठा करे और हाथ जोड़कर देवताओंका ध्यान करे।

तदनन्तर **'वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः'** इस नाममन्त्रसे गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप-दीप आदि उपचारोंसे कलशकी यथाविधि पूजा करे।

प्रार्थना—पूजनके अनन्तर हाथमें पुष्प लेकर इस प्रकार प्रार्थना करे—

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्॥
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः॥
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः।
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः॥
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः।
त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमीहे जलोद्भव।
सांनिध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा॥

नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय।
सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते॥
'अपां पतये वरुणाय नमः।'

नमस्कार—वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, प्रार्थनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि। (इस नाम-मन्त्रसे नमस्कारपूर्वक पुष्प समर्पित करे।)

समर्पण—अब हाथमें जल लेकर निम्नलिखित वाक्यका उच्चारण कर जल कलशके पास छोड़ते हुए समस्त पूजन-कर्म भगवान् वरुणदेवको निवेदित करे—

कृतेन अनेन पूजनेन कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्ताम्, न मम।

❑❑

षोडशमातृका-पूजन

षोडशमातृकाओंके पूजनके लिये सोलह कोष्ठकवाला एक चौकोर मण्डल बनाये। उन सोलह कोष्ठकोंमें पश्चिमसे पूर्वकी ओर क्रमशः (१) गौरी-गणेश, (२) पद्मा, (३) शची, (४) मेधा, (५) सावित्री, (६) विजया, (७) जया, (८) देवसेना, (९) स्वधा, (१०) स्वाहा, (११) मातृकाएँ, (१२) लोकमातृकाएँ, (१३) धृति,

(१४) पुष्टि, (१५) तुष्टि तथा (१६) आत्मकुलदेवता—इन सोलह मातृकाओंको स्थापित करे*—

'गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातृकाभ्यो नमः'—इस नाम-मन्त्रसे गन्ध आदि उपचारोंके द्वारा पूजन करे और निम्न मन्त्रसे नमस्कार करे—

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः॥
धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता।
गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्याश्च षोडश॥

समर्पण—'अनया पूजया गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातरः प्रीयन्ताम्, न मम'—कहकर मण्डलपर अक्षत छोड़े और पुनः प्रणाम करे।

❑❑

सप्तघृतमातृका-पूजन

श्री, लक्ष्मी, धृति, मेधा, पुष्टि, श्रद्धा तथा सरस्वती—ये सात सप्तघृतमातृकाएँ कहलाती हैं। इनके पूजनके लिये किसी वेदी अथवा पाटेपर प्रादेशमात्र (तर्जनीसे अंगुष्ठके बीचकी दूरी) स्थानमें पहले रोली या सिन्दूरसे स्वस्तिक

*. षोडशमातृका-मण्डल तथा सप्तघृतमातृकाका चित्र 'गीताप्रेस'से प्रकाशित 'नित्यकर्म-पूजाप्रकाश'में देखा जा सकता है।

बनाकर ॥ **श्रीः** ॥ लिखे। इसके नीचे एक बिन्दु और इसके नीचे दो बिन्दु, इसी प्रकार क्रमशः तीन, चार, पाँच, छः बिन्दु बनाते हुए सबसे नीचे सात बिन्दु बनाये। यह सप्तघृतमातृका-मण्डल है। इन्हें घीकी सात धाराएँ भी देनी चाहिये।

तदनन्तर '**सप्तघृतमातृकाभ्यो नमः**' इस मन्त्रद्वारा गन्धादि उपचारोंसे पूजन कर '**अनया पूजया वसोर्धारादेवताः प्रीयन्ताम्, न मम**' कहकर मण्डलपर अक्षत छोड़ दे और पूजन-कर्मको समर्पित कर दे।

❑❑

नवग्रह-पूजन

ग्रहोंके स्थापन-पूजनके लिये किसी वेदी अथवा पाटेपर नौ कोष्ठकोंका एक चौकोर मण्डल बनाये। बीचवाले कोष्ठकमें सूर्य, अग्निकोणके कोष्ठकमें चन्द्र, दक्षिणमें मंगल, ईशानकोणके कोष्ठकमें बुध, उत्तरमें बृहस्पति, पूर्वमें शुक्र, पश्चिममें शनि, नैर्ऋत्यकोणके कोष्ठकमें राहु और वायव्यकोणके कोष्ठकमें केतुकी स्थापना करे।*

ग्रहोंका आवाहन—हाथमें अक्षत लेकर सूर्यादि ग्रहोंके नाम-मन्त्रोंसे पूर्वोक्त कोष्ठकोंमें नौ ग्रहोंका

*. नवग्रहमण्डलका चित्र 'गीताप्रेस' से प्रकाशित 'नित्यकर्म-पूजाप्रकाश' में देखा जा सकता है।

पृथक्-पृथक् आवाहन-स्थापन करे और अक्षत छोड़ता जाय, यथा—

१- सूर्याय नमः, सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।
२- सोमाय नमः, सोममावाहयामि स्थापयामि।
३- भौमाय नमः, भौममावाहयामि स्थापयामि।
४- बुधाय नमः, बुधमावाहयामि स्थापयामि।
५- बृहस्पतये नमः, बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि।
६- शुक्राय नमः, शुक्रमावाहयामि स्थापयामि।
७- शनैश्चराय नमः, शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि।
८- राहवे नमः, राहुमावाहयामि स्थापयामि।
९- केतवे नमः, केतुमावाहयामि स्थापयामि।

प्रतिष्ठा—हाथमें अक्षत लेकर '**अस्मिन् नवग्रहमण्डले आवाहिताः सूर्यादिनवग्रहा देवाः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु**' कहकर ग्रहोंको प्रतिष्ठित करे और मण्डलपर अक्षत छोड़ दे।

तदनन्तर '**आवाहितसूर्यादिनवग्रहेभ्यो देवेभ्यो नमः**' इस मन्त्रसे गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप तथा नैवेद्य

आदि उपचारोंसे पूजनकर हाथ जोड़कर ग्रहोंकी प्रार्थना करे—

प्रार्थना— **ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च।**
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु॥
सूर्यः शौर्यमथेन्दुरुच्चपदवीं सन्मङ्गलं मङ्गलः
सद्बुद्धिं च बुधो गुरुश्च गुरुतां शुक्रः सुखं शं शनिः।
राहुर्बाहुबलं करोतु सततं केतुः कुलस्योन्नतिं
नित्यं प्रीतिकरा भवन्तु मम ते सर्वेऽनुकूला ग्रहाः॥

इसके बाद निम्नलिखित वाक्यका उच्चारण करते हुए नवग्रहमण्डलपर अक्षत छोड़ दे और नमस्कार करे—

निवेदन और नमस्कार—'अनया पूजया सूर्यादिनवग्रहाः प्रीयन्ताम्, न मम।'

इस प्रकार गणपति आदि देवोंका संक्षेपमें पूजनकर प्रधानदेव भगवान् सत्यनारायण (शालग्राम-शिला)-का पूजन आगे दी गयी विधिके अनुसार करे। ❑❑

* श्रीशालग्राम-पूजन *

[श्रीशालग्राम साक्षात् श्रीसत्यनारायण भगवान् हैं, नारायणस्वरूप हैं। इसलिये इस शिलामें प्राण-प्रतिष्ठा आदि संस्कारोंकी आवश्यकता नहीं होती। इनकी पूजामें आवाहन और विसर्जन भी नहीं होता। इनके साथ देवी भगवती तुलसीका नित्य संयोग माना गया है। शयनके समय तुलसीपत्रको शालग्राम-शिलासे हटाकर पार्श्वमें रख दिया जाता है। जहाँ शालग्राम-शिला होती है, वहाँ सभी तीर्थ और भुक्ति-मुक्तिका वास होता है। शालग्रामका चरणोदक सभी तीर्थोंसे अधिक पवित्र माना गया है। स्त्री, शूद्र एवं अनुपनीत ब्राह्मणादिको शालग्रामका स्पर्श नहीं करना चाहिये। ऐसी स्थितिमें प्रतिनिधिरूपमें यज्ञोपवीतधारी द्विजके द्वारा यह पूजा करानी चाहिये अथवा प्रतिमा या चित्रकी पूजा की जा सकती है, उसमें यह नियम नहीं है।]

सर्वप्रथम हाथमें पुष्प लेकर भगवान् शालग्राम श्रीसत्यनारायणका इस प्रकार ध्यान करना चाहिये—

ध्यान— **नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।**
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। ध्यानार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। (भगवान्‌के सामने पुष्प रख दे।)

शालग्राममें भगवान् विष्णुकी नित्य संनिधि रहती है, इसलिये उनका आवाहन नहीं होता, आवाहनके

स्थानपर प्रार्थनापूर्वक पुष्प समर्पित करे, अन्य प्रतिमाओंमें प्रतिष्ठापूर्वक इस प्रकार आवाहन करे—

आवाहन— **आगच्छ भगवन् देव स्थाने चात्र स्थिरो भव।**
यावत् पूजां करिष्यामि तावत् त्वं संनिधौ भव॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। आवाहनार्थे पुष्पं समर्पयामि। (आवाहनके लिये पुष्प चढ़ाये।)

आसन— **अनेकरत्नसंयुक्तं नानामणिगणान्वितम्।**
भावितं स्वर्णिमं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। (आसनके लिये पुष्प समर्पित करे।)

पाद्य— **गङ्गोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम्।**
पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं मे प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। पादयोः पाद्यं समर्पयामि। (आचमनीसे जल छोड़े।)

अर्घ्य— **गन्धपुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया।**
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं प्रसन्नो वरदो भव॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि। (अर्घ्यका जल छोड़े।)

आचमन— **कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम्।**
तोयमाचमनीयार्थं गृहाण परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल समर्पित करे।)

एक शुद्ध पात्रमें कुंकुम आदिसे स्वस्तिक बनाकर चन्दनयुक्त तुलसीदलके ऊपर भगवान्‌को स्थापित करके निम्नलिखित विधिसे स्नान कराये—

स्नान— **मन्दाकिन्यास्तु यद् वारि सर्वपापहरं शुभम्।**
तदिदं कल्पितं देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। स्नानीयं जलं समर्पयामि। (जलसे स्नान कराये।)

स्नानाङ्ग-आचमन—श्रीसत्यनारायणाय नमः। स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (स्नानके बाद आचमनीय जल समर्पित करे।)

दुग्धस्नान— कामधेनुसमुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम्।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। पयःस्नानं समर्पयामि। (दूधसे स्नान कराये, पुनः शुद्ध जलसे स्नान कराये।)

दधिस्नान— पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्।
दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। दधिस्नानं समर्पयामि। (दधिसे स्नान कराये, पुनः शुद्ध जलसे स्नान कराये।)

घृतस्नान— नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसंतोषकारकम्।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। घृतस्नानं समर्पयामि। (घृतसे स्नान कराये, पुनः शुद्ध जलसे स्नान कराये।)

मधुस्नान— पुष्परेणुसमुत्पन्नं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेजःपुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। मधुस्नानं समर्पयामि। (मधुसे स्नान कराये, पुनः शुद्ध जलसे स्नान कराये।)

शर्करास्नान— इक्षुरससमुद्भूतां शर्करां पुष्टिदां शुभाम्।
मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। शर्करास्नानं समर्पयामि। (शर्करासे स्नान कराये, पुनः शुद्ध जलसे स्नान कराये।)

पञ्चामृतस्नान—आगे लिखे गये मन्त्रको पढ़कर पंचामृतसे स्नान कराये—

पयो दधि घृतं चैव मधुशर्करयान्वितम्।
पञ्चामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि। (पंचामृतसे स्नान करानेके बाद शुद्ध जलसे स्नान कराये।)

गन्धोदकस्नान— मलयाचलसम्भूतचन्दनेन विमिश्रितम्।
इदं गन्धोदकस्नानं कुंकुमाक्तं नु गृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। गन्धोदकस्नानं समर्पयामि। (केसरमिश्रित चन्दनसे स्नान कराये।)

शुद्धोदकस्नान— शुद्धं यत्सलिलं दिव्यं गङ्गाजलसमं स्मृतम्।
समर्पितं मया भक्त्या शुद्धस्नानाय गृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। (शुद्ध जलसे स्नान कराये।)*

* यथासम्भव 'पुरुषसूक्त' का पाठ करते हुए घण्टानादपूर्वक शुद्ध जल अथवा गंगा आदि तीर्थोंके जलोंद्वारा भगवान् शालग्रामका अभिषेक भी करना चाहिये, इससे उनकी विशेष अनुकम्पा प्राप्त होती है। सत्यनारायण-पूजा अथवा शालग्रामकी नित्य-पूजामें शालग्रामकी मूर्तिको किसी पवित्र पात्रमें रखकर पंचामृत अथवा शुद्ध जलसे अभिषेक करानेके बाद मूर्तिको शुद्ध वस्त्रसे पोंछकर गन्धयुक्त तुलसीदलके साथ किसी सिंहासन अथवा यथास्थान पात्र आदिमें विराजमान कराकर आगेकी पूजा करनी चाहिये।

[तदनन्तर आचमनीय जल समर्पित करे। फिर स्वच्छ वस्त्रसे अंगप्रोक्षण (पोंछ)–कर तुलसीदल एवं चन्दनके साथ शालग्रामको किसी सिंहासन आदिमें बैठाकर शेष पूजा करनी चाहिये। भगवान्‌के स्नानीय अथवा अभिषेकका जल पवित्र जगहमें ढककर रख दे। पूजनके अन्तमें चरणोदकके रूपमें इसे ग्रहण करना चाहिये।]

वस्त्र— **शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।**
देहालङ्करणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। वस्त्रं समर्पयामि आचमनीयं जलं च समर्पयामि। (वस्त्र चढ़ाये, पुनः आचमनीय जल दे।)

उपवस्त्र— **उपवस्त्रं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने।**
भक्त्या समर्पितं देव प्रसीद परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। उपवस्त्रं समर्पयामि आचमनीयं जलं च समर्पयामि। (उपवस्त्र चढ़ाये, पुनः आचमनीय जल दे।)

यज्ञोपवीत— **नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।**
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। यज्ञोपवीतं समर्पयामि। यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं जलं च समर्पयामि। (यज्ञोपवीत अर्पण करे, पुनः आचमनीय जल दे।)

गन्ध— **श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।**
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। चन्दनं समर्पयामि। (मलय-चन्दन चढ़ाये।)

(शालग्रामपर अक्षत नहीं चढ़ाया जाता, अतः अक्षतके स्थानपर श्वेत तिल अर्पित करना चाहिये। श्वेत तिलके अभावमें तुलसीपत्र भी अर्पित किया जा सकता है।)

अक्षत (श्वेत तिल)—अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। अक्षतस्थाने श्वेततिलान् समर्पयामि। (श्वेत तिल चढ़ाये।)

पुष्प— **माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।**
मयानीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। पुष्पं पुष्पमालां च समर्पयामि। (पुष्प और पुष्पमालाओंसे अलंकृत करे।)

तुलसीपत्र— **तुलसीं हेमरूपां च रत्नरूपां च मञ्जरीम्।**
भवमोक्षप्रदां तुभ्यमर्पयामि हरिप्रियाम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। तुलसीदलं तुलसीमञ्जरीं च समर्पयामि। (तुलसीदल तथा तुलसीमंजरी अर्पित करे।)

दूर्वा— **दूर्वांकुरान् सुहरितानमृतान् मङ्गलप्रदान्।**
आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। दूर्वांकुरान् समर्पयामि। (दूब अर्पित करे।)

आभूषण— **वज्रमाणिक्यवैदूर्यमुक्ताविद्रुममण्डितम्।**
पुष्परागसमायुक्तं भूषणं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। अलङ्करणार्थे आभूषणानि समर्पयामि। (अलंकृत करनेके लिये आभूषण समर्पित करे।)

सुगन्धित तैल— **तैलानि च सुगन्धीनि द्रव्याणि विविधानि च।**
मया दत्तानि लेपार्थं गृहाण परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। सुगन्धिततैलादिद्रव्यं समर्पयामि। (सुगन्धित तेल, इतर आदि अर्पित करे।)

अबीर, गुलाल आदि नाना परिमल द्रव्य—

अबीरं च गुलालं च हरिद्रादिसमन्वितम्।
नानापरिमलं द्रव्यं गृहाण परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि। (अबीर, गुलाल आदि चढ़ाये।)

धूप— **वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।**
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। धूपमाघ्रापयामि। (धूप दिखाये।)

दीप— **साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।**
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। दीपं दर्शयामि। (घृत-दीप दिखाये तथा हाथ धो ले।)

नैवेद्य—भगवान्‌के भोगके निमित्त सामने रखे नैवेद्यमें तुलसीदल छोड़कर पाँच ग्रास-मुद्रा दिखाये—

१. **प्राणाय स्वाहा**—कनिष्ठिका, अनामिका और अँगूठा मिलाये।

२. **अपानाय स्वाहा**—अनामिका, मध्यमा और अँगूठा मिलाये।

३. **व्यानाय स्वाहा**—मध्यमा, तर्जनी और अँगूठा मिलाये।

४. **उदानाय स्वाहा**—तर्जनी, मध्यमा, अनामिका और अँगूठा मिलाये।

५. **समानाय स्वाहा**—सब अँगुलियाँ मिलाये।

इसके बाद निम्न मन्त्र पढ़कर भगवान्‌को नैवेद्य निवेदित करे—

त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये।
गृहाण सुमुखो भूत्वा प्रसीद परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। नैवेद्यं निवेदयामि, मध्ये पानीयं जलं समर्पयामि, आचमनीयं जलं च समर्पयामि। (नैवेद्य निवेदित करे तथा पानीय जल अर्पित करे, पुनः आचमनीय जल अर्पित करे।)

अखण्ड ऋतुफल— इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। अखण्डऋतुफलं समर्पयामि। (अखण्ड ऋतुफल समर्पित करे।)

फलान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनीय जल अर्पित करे।)

उत्तरापोऽशन—उत्तरापोऽशनार्थे जलं समर्पयामि। श्रीसत्यनारायणाय नमः। (जल दे।)

करोद्वर्तन— चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम्।
करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। करोद्वर्तनकं चन्दनं समर्पयामि। (कस्तूरी आदिके साथ घिसकर बनाया हुआ मलय-चन्दन समर्पित करे।)

ताम्बूल— पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।
एलालवंगसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। एलालवंगपूगीफलयुतं ताम्बूलं समर्पयामि। (इलायची, लवंग तथा पूगीफलयुक्त ताम्बूल अर्पित करे।)

दक्षिणा— दक्षिणा प्रेमसहिता यथाशक्तिसमर्पिता।
अनन्तफलदामेनां गृहाण परमेश्वर॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि। (द्रव्य-दक्षिणा अर्पित करे।)

प्रार्थना— सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम्।
सहारवक्षःस्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम्॥

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। प्रार्थनां समर्पयामि। (प्रार्थना निवेदित करे।)

सरस्वतीपूजन (पुस्तकपूजन) तथा ब्राह्मणपूजन

गन्ध, अक्षत, पुष्प, पुष्पमाला, धूप, दीप, नैवेद्य तथा दक्षिणा आदि उपचारोंसे पुस्तकरूपमें भगवती सरस्वतीकी पूजाके अनन्तर ब्राह्मणका पूजन करे। तदनन्तर श्रद्धा-भक्तिके साथ भगवान् श्रीसत्यनारायणकी कथाका श्रवण करे।

□□

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

* अथ श्रीसत्यनारायणव्रतकथा *

पहला अध्याय

श्रीसत्यनारायणव्रतकी महिमा तथा व्रतकी विधि

व्यास उवाच

एकदा नैमिषारण्ये ऋषयः शौनकादयः। पप्रच्छुर्मुनयः सर्वे सूतं पौराणिकं खलु॥ १॥

श्रीव्यासजीने कहा—एक समय नैमिषारण्य तीर्थमें शौनक आदि सभी ऋषियों तथा मुनियोंने पुराणशास्त्रके वेत्ता श्रीसूतजी महाराजसे पूछा—॥ १॥

ऋषय ऊचुः

व्रतेन तपसा किं वा प्राप्यते वाञ्छितं फलम्। तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामः कथयस्व महामुने॥ २॥

ऋषियोंने कहा—महामुने! किस व्रत अथवा तपस्यासे मनोवांछित फल प्राप्त होता है, उसे हम सब सुनना चाहते हैं, आप कहें॥ २॥

सूत उवाच

नारदेनैव सम्पृष्टो भगवान् कमलापतिः। सुरर्षये यथैवाह तच्छृणुध्वं समाहिताः॥ ३॥
एकदा नारदो योगी परानुग्रहकाङ्‌क्षया। पर्यटन् विविधान् लोकान् मर्त्यलोकमुपागतः॥ ४॥
ततो दृष्ट्वा जनान् सर्वान् नानाक्लेशसमन्वितान्। नानायोनिसमुत्पन्नान् क्लिश्यमानान् स्वकर्मभिः॥ ५॥
केनोपायेन चैतेषां दुःखनाशो भवेद् ध्रुवम्। इति संचिन्त्य मनसा विष्णुलोकं गतस्तदा॥ ६॥

श्रीसूतजी बोले—इसी प्रकार देवर्षि नारदजीके द्वारा भी पूछे जानेपर भगवान् कमलापतिने उनसे जैसा कहा था, उसे कह रहा हूँ, आपलोग सावधान होकर सुनें। एक समय योगी नारदजी लोगोंके कल्याणकी कामनासे विविध लोकोंमें भ्रमण करते हुए मृत्युलोकमें आये और यहाँ उन्होंने अपने कर्मफलके अनुसार नाना योनियोंमें उत्पन्न सभी प्राणियोंको अनेक प्रकारके क्लेश-दुःख भोगते हुए देखा तथा 'किस उपायसे इनके दुःखोंका सुनिश्चित रूपसे नाश हो सकता है', ऐसा मनमें विचार करके वे विष्णुलोक गये॥ ३—६॥

तत्र नारायणं देवं शुक्लवर्णं चतुर्भुजम्। शङ्खचक्रगदापद्मवनमालाविभूषितम् ॥ ७॥
दृष्ट्वा तं देवदेवेशं स्तोतुं समुपचक्रमे।

वहाँ चार भुजाओंवाले और शंख, चक्र, गदा, पद्म तथा वनमालासे विभूषित शुक्लवर्ण भगवान् नारायणका दर्शन कर उन देवाधिदेवकी वे स्तुति करने लगे॥ ७१/२॥

नारद उवाच

नमो वाङ्मनसातीतरूपायानन्तशक्तये॥ ८॥
आदिमध्यान्तहीनाय निर्गुणाय गुणात्मने। सर्वेषामादिभूताय भक्तानामार्तिनाशिने॥ ९॥
श्रुत्वा स्तोत्रं ततो विष्णुर्नारदं प्रत्यभाषत।

नारदजी बोले—हे वाणी और मनसे परे स्वरूपवाले, अनन्तशक्तिसम्पन्न, आदि-मध्य और अन्तसे रहित, निर्गुण और सकल कल्याणमय गुणगणोंसे सम्पन्न, स्थावर-जंगमात्मक निखिल सृष्टिप्रपंचके कारणभूत तथा भक्तोंकी पीडा नष्ट करनेवाले परमात्मन्! आपको नमस्कार है। स्तुति सुननेके अनन्तर भगवान् श्रीविष्णुने नारदजीसे कहा— ॥ ८-९१/२ ॥

श्रीभगवानुवाच

किमर्थमागतोऽसि त्वं किं ते मनसि वर्तते। कथयस्व महाभाग तत्सर्वं कथयामि ते॥ १०॥

श्रीभगवान्ने कहा—महाभाग! आप किस प्रयोजनसे यहाँ आये हैं, आपके मनमें क्या है, कहिये, वह सब कुछ मैं आपको बताऊँगा॥ १०॥

नारद उवाच

मर्त्यलोके जनाः सर्वे नानाक्लेशसमन्विताः। नानायोनिसमुत्पन्नाः पच्यन्ते पापकर्मभिः॥ ११॥
तत्कथं शमयेन्नाथ लघूपायेन तद्वद। श्रोतुमिच्छामि तत्सर्वं कृपास्ति यदि ते मयि॥ १२॥

नारदजी बोले—[भगवन्!] मृत्युलोकमें अपने पापकर्मोंके द्वारा विभिन्न योनियोंमें उत्पन्न सभी लोग बहुत प्रकारके क्लेशोंसे दुःखी हो रहे हैं। हे नाथ! किस लघु उपायसे उनके कष्टोंका निवारण हो सकेगा, यदि आपकी मेरे ऊपर कृपा हो तो वह सब मैं सुनना चाहता हूँ। उसे बतायें॥ ११-१२॥

श्रीभगवानुवाच

साधु पृष्टं त्वया वत्स लोकानुग्रहकाङ्क्षया। यत्कृत्वा मुच्यते मोहात् तच्छृणुष्व वदामि ते॥ १३॥
व्रतमस्ति महत्पुण्यं स्वर्गे मर्त्ये च दुर्लभम्। तव स्नेहान्मया वत्स प्रकाशः क्रियतेऽधुना॥ १४॥
सत्यनारायणस्यैव व्रतं सम्यग्विधानतः। कृत्वा सद्यः सुखं भुक्त्वा परत्र मोक्षमाप्नुयात्॥ १५॥
तच्छ्रुत्वा भगवद्वाक्यं नारदो मुनिरब्रवीत्।

श्रीभगवान्‌ने कहा—हे वत्स! संसारके ऊपर अनुग्रह करनेकी इच्छासे आपने बहुत अच्छी (उत्तम) बात पूछी है। जिस [व्रत]-के करनेसे प्राणी मोहसे मुक्त हो जाता है, उसे आपको बताता हूँ, सुनें। हे वत्स! स्वर्ग और मृत्युलोकमें दुर्लभ [भगवान् सत्यनारायणका] एक महान् पुण्यप्रद व्रत है। आपके स्नेहके कारण इस समय मैं उसे कह रहा हूँ। 'अच्छी प्रकार विधि-विधानसे भगवान् सत्यनारायणका व्रत करके मनुष्य शीघ्र ही सुख प्राप्तकर परलोकमें मोक्ष प्राप्त कर सकता है।' भगवान्‌की ऐसी वाणी सुनकर नारद मुनिने कहा—॥ १३—१५½॥

नारद उवाच

किं फलं किं विधानं च कृतं केनैव तद् व्रतम्॥ १६॥
तत्सर्वं विस्तराद् ब्रूहि कदा कार्यं व्रतं प्रभो।

नारदजी बोले—प्रभो! इस व्रतको करनेका फल क्या है, इसका विधान क्या है, इस व्रतको किसने किया और कब इसे करना चाहिये? यह सब विस्तारपूर्वक बतलाइये॥ १६½॥

श्रीभगवानुवाच

दुःखशोकादिशमनं धनधान्यप्रवर्धनम्॥ १७॥
सौभाग्यसंततिकरं सर्वत्र विजयप्रदम्। यस्मिन् कस्मिन् दिने मर्त्यो भक्तिश्रद्धासमन्वितः॥ १८॥
सत्यनारायणं देवं यजेच्चैव निशामुखे। ब्राह्मणैर्बान्धवैश्चैव सहितो धर्मतत्परः॥ १९॥
नैवेद्यं भक्तितो दद्यात् सपादं भक्ष्यमुत्तमम्। रम्भाफलं घृतं क्षीरं गोधूमस्य च चूर्णकम्॥ २०॥
अभावे शालिचूर्णं वा शर्करा वा गुडस्तथा। सपादं सर्वभक्ष्याणि चैकीकृत्य निवेदयेत्॥ २१॥

श्रीभगवान्ने कहा—यह सत्यनारायणव्रत दुःख-शोक आदिका शमन करनेवाला, धन-धान्यकी वृद्धि करनेवाला, सौभाग्य और संतान देनेवाला तथा सर्वत्र विजय प्रदान करनेवाला है। जिस-किसी भी दिन भक्ति और श्रद्धासे समन्वित होकर मनुष्य ब्राह्मणों और बन्धु-बान्धवोंके साथ धर्ममें तत्पर होकर सायंकाल भगवान्

सत्यनारायणकी पूजा करे। नैवेद्यके रूपमें उत्तम कोटिके भोजनीय पदार्थको सवाया मात्रामें भक्तिपूर्वक अर्पित करना चाहिये। केलेका फल, घी, दूध, गेहूँका चूर्ण अथवा गेहूँके चूर्णके अभावमें साठी चावलका चूर्ण, शक्कर या गुड़—यह सब भक्ष्य सामग्री सवाया मात्रामें एकत्र कर निवेदित करनी चाहिये॥ १७—२१ ॥

विप्राय दक्षिणां दद्यात् कथां श्रुत्वा जनैः सह । ततश्च बन्धुभिः सार्धं विप्रांश्च प्रतिभोजयेत्॥ २२ ॥
प्रसादं भक्षयेद् भक्त्या नृत्यगीतादिकं चरेत्। ततश्च स्वगृहं गच्छेत् सत्यनारायणं स्मरन्॥ २३ ॥
एवं कृते मनुष्याणां वाञ्छासिद्धिर्भवेद् ध्रुवम्। विशेषतः कलियुगे लघूपायोऽस्ति भूतले॥ २४ ॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

बन्धु-बान्धवोंके साथ श्रीसत्यनारायण भगवान्‌की कथा सुनकर ब्राह्मणको दक्षिणा देनी चाहिये। तदनन्तर बन्धु-बान्धवोंके साथ ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये। भक्तिपूर्वक प्रसाद ग्रहण करके नृत्य-गीत आदिका आयोजन करना चाहिये। तदनन्तर भगवान् सत्यनारायणका स्मरण करते हुए अपने घर जाना चाहिये। ऐसा करनेसे मनुष्योंकी अभिलाषा अवश्य ही पूर्ण होती है। विशेषरूपसे कलियुगमें, पृथ्वीलोकमें यह सबसे छोटा-सा उपाय है॥ २२—२४ ॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दपुराणके अन्तर्गत रेवाखण्डमें श्रीसत्यनारायणव्रतकथाका यह पहला अध्याय पूरा हुआ॥ १ ॥

□□

दूसरा अध्याय

निर्धन ब्राह्मण तथा काष्ठक्रेताकी कथा

सूत उवाच

अथान्यत् सम्प्रवक्ष्यामि कृतं येन पुरा द्विजाः। कश्चित् काशीपुरे रम्ये ह्यासीद् विप्रोऽतिनिर्धनः॥ १॥
क्षुत्तृड्भ्यां व्याकुलो भूत्वा नित्यं बभ्राम भूतले। दुःखितं ब्राह्मणं दृष्ट्वा भगवान् ब्राह्मणप्रियः॥ २॥
वृद्धब्राह्मणरूपस्तं पप्रच्छ द्विजमादरात्। किमर्थं भ्रमसे विप्र महीं नित्यं सुदुःखितः॥ ३॥
तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि कथ्यतां द्विजसत्तम।

श्रीसूतजी बोले—हे द्विजो! अब मैं पुनः पूर्वकालमें जिसने इस सत्यनारायणव्रतको किया था, उसे भलीभाँति विस्तारपूर्वक कहूँगा। रमणीय काशी नामक नगरमें कोई अत्यन्त निर्धन ब्राह्मण रहता था। भूख और प्याससे व्याकुल होकर वह प्रतिदिन पृथ्वीपर भटकता रहता था। ब्राह्मणप्रिय भगवान्‌ने उस दुःखी ब्राह्मणको देखकर वृद्ध ब्राह्मणका रूप धारण करके उस द्विजसे आदरपूर्वक पूछा—हे विप्र! प्रतिदिन अत्यन्त दुःखी होकर तुम किसलिये पृथ्वीपर भ्रमण करते रहते हो। हे द्विजश्रेष्ठ! यह सब बतलाओ, मैं सुनना चाहता हूँ॥ १—३ $^{1}/_{2}$ ॥

ब्राह्मण उवाच

ब्राह्मणोऽतिदरिद्रोऽहं भिक्षार्थं वै भ्रमे महीम्॥ ४॥
उपायं यदि जानासि कृपया कथय प्रभो।

ब्राह्मण बोला—प्रभो! मैं अत्यन्त दरिद्र ब्राह्मण हूँ और भिक्षाके लिये ही पृथ्वीपर घूमा करता हूँ। यदि [मेरी इस दरिद्रताको दूर करनेका] आप कुछ उपाय जानते हों तो कृपापूर्वक बतलाइये॥ ४१/२ ॥

वृद्धब्राह्मण उवाच

सत्यनारायणो विष्णुर्वाञ्छितार्थफलप्रदः ॥ ५ ॥
तस्य त्वं पूजनं विप्र कुरुष्व व्रतमुत्तमम्। यत्कृत्वा सर्वदुःखेभ्यो मुक्तो भवति मानवः ॥ ६ ॥
विधानं च व्रतस्यापि विप्रायाभाष्य यत्नतः। सत्यनारायणो वृद्धस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ ७ ॥
तद् व्रतं संकरिष्यामि यदुक्तं ब्राह्मणेन वै। इति संचिन्त्य विप्रोऽसौ रात्रौ निद्रां न लब्धवान्॥ ८ ॥

वृद्ध ब्राह्मणने कहा—[हे ब्राह्मणदेव!] सत्यनारायण भगवान् विष्णु अभीष्ट फलको देनेवाले हैं। हे विप्र! तुम उनका उत्तम व्रत एवं पूजन करो, जिसे करनेसे मनुष्य सभी दुःखोंसे मुक्त हो जाता है और व्रतके विधानको भी ब्राह्मणसे यत्नपूर्वक कहकर वृद्धब्राह्मणरूपधारी भगवान् सत्यनारायण वहींपर अन्तर्धान हो गये। 'वृद्ध ब्राह्मणने जैसा कहा है, उस व्रतको अच्छी प्रकारसे वैसे ही करूँगा'—यह सोचते हुए उस ब्राह्मणको रातमें नींद नहीं आयी॥ ५—८॥

ततः प्रातः समुत्थाय सत्यनारायणव्रतम्। करिष्य इति संकल्प्य भिक्षार्थमगमद् द्विजः ॥ ९ ॥
तस्मिन्नेव दिने विप्रः प्रचुरं द्रव्यमाप्तवान्। तेनैव बन्धुभिः सार्धं सत्यस्य व्रतमाचरत्॥ १० ॥
सर्वदुःखविनिर्मुक्तः सर्वसम्पत्समन्वितः। बभूव स द्विजश्रेष्ठो व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥ ११ ॥

ततः प्रभृतिकालं च मासि मासि व्रतं कृतम्।
एवं नारायणस्येदं व्रतं कृत्वा द्विजोत्तमः। सर्वपापविनिर्मुक्तो दुर्लभं मोक्षमाप्तवान्॥ १२॥

तदनन्तर प्रातःकाल उठकर 'सत्यनारायणका व्रत करूँगा' ऐसा संकल्प करके वह ब्राह्मण भिक्षाके लिये चल पड़ा। उस दिन ही ब्राह्मणको [भिक्षामें] बहुत-सा धन प्राप्त हुआ। उसी धनसे उसने बन्धु-बान्धवोंके साथ भगवान् सत्यनारायणका व्रत किया। इस व्रतके प्रभावसे वह श्रेष्ठ ब्राह्मण सभी दुःखोंसे मुक्त होकर समस्त सम्पत्तियोंसे सम्पन्न हो गया। उस दिनसे लेकर प्रत्येक महीने उसने यह व्रत किया। इस प्रकार भगवान् सत्यनारायणके इस व्रतको करके वह श्रेष्ठ ब्राह्मण सभी पापोंसे मुक्त हो गया और उसने दुर्लभ मोक्षपदको प्राप्त किया॥ ९—१२॥

व्रतमस्य यदा विप्र पृथिव्यां संकरिष्यति। तदैव सर्वदुःखं तु मनुजस्य विनश्यति॥ १३॥
एवं नारायणेनोक्तं नारदाय महात्मने। मया तत्कथितं विप्राः किमन्यत् कथयामि वः॥ १४॥

हे विप्र! पृथ्वीपर जब भी कोई मनुष्य श्रीसत्यनारायणका व्रत करेगा, उसी समय उसके समस्त दुःख नष्ट हो जायँगे। हे ब्राह्मणो! इस प्रकार भगवान् नारायणने महात्मा नारदजीसे जो कुछ कहा, मैंने वह सब आपलोगोंसे कह दिया, आगे अब और क्या कहूँ?॥ १३-१४॥

ऋषय ऊचुः

तस्माद् विप्राच्छ्रुतं केन पृथिव्यां चरितं मुने। तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामः श्रद्धाऽस्माकं प्रजायते॥ १५॥

ऋषियोंने कहा—हे मुने! इस पृथ्वीपर उस ब्राह्मणसे सुने हुए इस व्रतको किसने किया? हम वह सब सुनना चाहते हैं, [उस व्रतपर] हमारी श्रद्धा हो रही है॥ १५॥

सूत उवाच

श्रृणुध्वं मुनयः सर्वे व्रतं येन कृतं भुवि। एकदा स द्विजवरो यथाविभवविस्तरैः॥ १६॥
बन्धुभिः स्वजनैः सार्धं व्रतं कर्तुं समुद्यतः। एतस्मिन्नन्तरे काले काष्ठक्रेता समागमत्॥ १७॥
बहिः काष्ठं च संस्थाप्य विप्रस्य गृहमाययौ। तृष्णाया पीडितात्मा च दृष्ट्वा विप्रं कृतं व्रतम्॥ १८॥
प्रणिपत्य द्विजं प्राह किमिदं क्रियते त्वया। कृते किं फलमाप्नोति विस्तराद् वद मे प्रभो॥ १९॥

श्रीसूतजी बोले—मुनियो! पृथ्वीपर जिसने यह व्रत किया, उसे आपलोग सुनें। एक बार वह द्विजश्रेष्ठ अपनी धन-सम्पत्तिके अनुसार बन्धु-बान्धवों तथा पारिवारिकजनोंके साथ व्रत करनेके लिये उद्यत हुआ। इसी बीच एक लकड़हारा वहाँ आया और लकड़ी बाहर रखकर उस ब्राह्मणके घर गया। प्याससे व्याकुल वह उस ब्राह्मणको व्रत करता हुआ देख प्रणाम करके उससे बोला—प्रभो! आप यह क्या कर रहे हैं, इसके करनेसे किस फलकी प्राप्ति होती है, विस्तारपूर्वक मुझसे कहिये॥ १६—१९॥

विप्र उवाच

सत्यनारायणस्येदं व्रतं सर्वेप्सितप्रदम्। तस्य प्रसादान्मे सर्वं धनधान्यादिकं महत्॥ २०॥
तस्मादेतद् व्रतं ज्ञात्वा काष्ठक्रेताऽतिहर्षितः। पपौ जलं प्रसादं च भुक्त्वा स नगरं ययौ॥ २१॥
सत्यनारायणं देवं मनसा इत्यचिन्तयत्। काष्ठं विक्रयतो ग्रामे प्राप्यते चाद्य यद् धनम्॥ २२॥
तेनैव सत्यदेवस्य करिष्ये व्रतमुत्तमम्। इति संचिन्त्य मनसा काष्ठं धृत्वा तु मस्तके॥ २३॥

जगाम नगरे रम्ये धनिनां यत्र संस्थितिः। तद्दिने काष्ठमूल्यं च द्विगुणं प्राप्तवानसौ॥ २४॥

विप्रने कहा—यह सत्यनारायणका व्रत है, जो सभी मनोरथोंको प्रदान करनेवाला है। उसीके प्रभावसे मुझे यह सब महान् धन-धान्य आदि प्राप्त हुआ है। जल पीकर तथा प्रसाद ग्रहण करके वह नगर चला गया। सत्यनारायणदेवके लिये मनसे ऐसा सोचने लगा कि 'आज लकड़ी बेचनेसे जो धन प्राप्त होगा, उसी धनसे भगवान् सत्यनारायणका श्रेष्ठ व्रत करूँगा।' इस प्रकार मनसे चिन्तन करता हुआ लकड़ीको मस्तकपर रखकर उस सुन्दर नगरमें गया, जहाँ धन-सम्पन्न लोग रहते थे। उस दिन उसने लकड़ीका दुगुना मूल्य प्राप्त किया॥ २०—२४॥

ततः प्रसन्नहृदयः सुपक्वं कदलीफलम्। शर्कराघृतदुग्धं च गोधूमस्य च चूर्णकम्॥ २५॥
कृत्वैकत्र सपादं च गृहीत्वा स्वगृहं ययौ। ततो बन्धून् समाहूय चकार विधिना व्रतम्॥ २६॥
तद् व्रतस्य प्रभावेण धनपुत्रान्वितोऽभवत्। इहलोके सुखं भुक्त्वा चान्ते सत्यपुरं ययौ॥ २७॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां द्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

तदनन्तर प्रसन्न-हृदय होकर वह पके हुए केलेका फल, शर्करा, घी, दूध और गेहूँका चूर्ण सवाया मात्रामें लेकर अपने घर गया। तत्पश्चात् उसने [अपने] बान्धवोंको बुलाकर विधि-विधानसे भगवान् श्रीसत्यनारायणका व्रत किया। उस व्रतके प्रभावसे वह धन-पुत्रसे सम्पन्न हो गया और इस लोकमें अनेक सुखोंका उपभोगकर अन्तमें सत्यपुर (वैकुण्ठलोक) चला गया॥ २५—२७॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दपुराणके अन्तर्गत रेवाखण्डमें श्रीसत्यनारायणव्रतकथाका यह दूसरा अध्याय पूरा हुआ॥ २॥

❑❑

तीसरा अध्याय

राजा उल्कामुख, साधु वणिक् एवं लीलावती-कलावतीकी कथा

सूत उवाच

पुनरग्रे प्रवक्ष्यामि शृणुध्वं मुनिसत्तमाः। पुरा चोल्कामुखो नाम नृपश्चासीन्महामतिः ॥ १ ॥
जितेन्द्रियः सत्यवादी ययौ देवालयं प्रति। दिने दिने धनं दत्त्वा द्विजान् संतोषयत् सुधीः ॥ २ ॥
भार्या तस्य प्रमुग्धा च सरोजवदना सती। भद्रशीलानदीतीरे सत्यस्य व्रतमाचरत् ॥ ३ ॥
एतस्मिन्नन्तरे तत्र साधुरेकः समागतः। वाणिज्यार्थं बहुधनैरनेकैः परिपूरितः ॥ ४ ॥
नावं संस्थाप्य तत्तीरे जगाम नृपतिं प्रति। दृष्ट्वा स व्रतिनं भूपं पप्रच्छ विनयान्वितः ॥ ५ ॥

श्रीसूतजी बोले—श्रेष्ठ मुनियो! अब मैं पुनः आगेकी कथा कहूँगा, आप लोग सुनें। प्राचीन कालमें उल्कामुख नामका एक राजा था। वह जितेन्द्रिय, सत्यवादी तथा अत्यन्त बुद्धिमान् था। वह विद्वान् राजा प्रतिदिन देवालय जाता और ब्राह्मणोंको धन देकर संतुष्ट करता था। कमलके समान मुखवाली उसकी धर्मपत्नी शील, विनय एवं सौन्दर्य आदि गुणोंसे सम्पन्न तथा पतिपरायणा थी। राजा [*एक दिन अपनी धर्मपत्नीके साथ*] *भद्रशीला*

नदीके तटपर श्रीसत्यनारायणका व्रत कर रहा था। उसी समय व्यापारके लिये अनेक प्रकारकी पुष्कल धनराशिसे सम्पन्न एक साधु [वणिक्] वहाँ आया। भद्रशीला नदीके तटपर नावको स्थापित कर वह राजाके समीप गया और राजाको उस व्रतमें दीक्षित देखकर विनयपूर्वक पूछने लगा॥ १—५॥

साधुरुवाच

किमिदं कुरुषे राजन् भक्तियुक्तेन चेतसा। प्रकाशं कुरु तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि साम्प्रतम्॥ ६॥

साधुने कहा—राजन्! आप भक्तियुक्त चित्तसे यह क्या कर रहे हैं? कृपया वह सब बताइये, इस समय मैं सुनना चाहता हूँ॥ ६॥

राजोवाच

पूजनं क्रियते साधो विष्णोरतुलतेजसः। व्रतं च स्वजनैः सार्धं पुत्राद्यावाप्तिकाम्यया॥ ७॥

राजा बोले—हे साधो! पुत्र आदिकी प्राप्तिकी कामनासे अपने बन्धु-बान्धवोंके साथ मैं अतुल तेजसम्पन्न भगवान् विष्णुका व्रत एवं पूजन कर रहा हूँ॥ ७॥

भूपस्य वचनं श्रुत्वा साधुः प्रोवाच सादरम्। सर्वं कथय मे राजन् करिष्येऽहं तवोदितम्॥ ८॥
ममापि संततिर्नास्ति ह्येतस्माज्जायते ध्रुवम्। ततो निवृत्त्य वाणिज्यात् सानन्दो गृहमागतः॥ ९॥

भार्यायै कथितं सर्वं व्रतं संततिदायकम्। तदा व्रतं करिष्यामि यदा मे संततिर्भवेत्॥ १०॥
इति लीलावतीं प्राह पत्नीं साधुः स सत्तमः।

राजाकी बात सुनकर साधुने आदरपूर्वक कहा—राजन्! इस विषयमें आप मुझे सब कुछ विस्तारसे बतलाइये, आपके कथनानुसार मैं [व्रत एवं पूजन] करूँगा। मुझे भी संतति नहीं है। 'इससे अवश्य ही संतति प्राप्त होगी'—ऐसा विचार कर वह व्यापारसे निवृत्त हो आनन्दपूर्वक अपने घर आया। उसने अपनी भार्यासे संतति प्रदान करनेवाले इस सत्यव्रतको विस्तारपूर्वक बताया तथा—'जब मुझे संततिकी प्राप्ति होगी तब मैं इस व्रतको करूँगा'—इस प्रकार उस साधुने अपनी भार्या लीलावतीसे कहा॥ ८—१०$^{१}/_{२}$॥

एकस्मिन् दिवसे तस्य भार्या लीलावती सती॥ ११॥
भर्तृयुक्तानन्दचित्ताऽभवद् धर्मपरायणा। गर्भिणी साऽभवत् तस्य भार्या सत्यप्रसादतः॥ १२॥
दशमे मासि वै तस्याः कन्यारत्नमजायत। दिने दिने सा ववृधे शुक्लपक्षे यथा शशी॥ १३॥
नाम्ना कलावती चेति तन्नामकरणं कृतम्। ततो लीलावती प्राह स्वामिनं मधुरं वचः॥ १४॥
न करोषि किमर्थं वै पुरा संकल्पितं व्रतम्।

एक दिन उसकी लीलावती नामकी सती-साध्वी भार्या पतिके साथ आनन्दचित्तसे ऋतुकालीन धर्माचरणमें

प्रवृत्त हुई और भगवान् श्रीसत्यनारायणकी कृपासे उसकी वह भार्या गर्भिणी हुई। दसवें महीनेमें उससे कन्यारत्नकी उत्पत्ति हुई और वह शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी भाँति दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी। उस कन्याका 'कलावती' यह नाम रखा गया। इसके बाद एक दिन लीलावतीने अपने स्वामीसे मधुर वाणीमें कहा—आप पूर्वमें संकल्पित श्रीसत्यनारायणके व्रतको क्यों नहीं कर रहे हैं?॥ ११—१४१/२ ॥

साधुरुवाच

विवाहसमये त्वस्याः करिष्यामि व्रतं प्रिये॥ १५॥

इति भार्यां समाश्वास्य जगाम नगरं प्रति। ततः कलावती कन्या ववृधे पितृवेश्मनि॥ १६॥
दृष्ट्वा कन्यां ततः साधुर्नगरे सखिभिः सह। मन्त्रयित्वा द्रुतं दूतं प्रेषयामास धर्मवित्॥ १७॥
विवाहार्थं च कन्याया वरं श्रेष्ठं विचारय। तेनाज्ञप्तश्च दूतोऽसौ काञ्चनं नगरं ययौ॥ १८॥
तस्मादेकं वणिक्पुत्रं समादायागतो हि सः। दृष्ट्वा तु सुन्दरं बालं वणिक्पुत्रं गुणान्वितम्॥ १९॥
ज्ञातिभिर्बन्धुभिः सार्धं परितुष्टेन चेतसा। दत्तवान् साधुपुत्राय कन्यां विधिविधानतः॥ २०॥

साधु बोला—'प्रिये! इसके विवाहके समय व्रत करूँगा।' इस प्रकार अपनी पत्नीको भलीभाँति आश्वस्त कर [वह व्यापार करनेके लिये] नगरकी ओर चला गया। इधर कन्या कलावती पिताके घरमें बढ़ने लगी।

तदनन्तर धर्मज्ञ साधुने नगरमें सखियोंके साथ [क्रीडा करती हुई अपनी] कन्याको विवाहयोग्य देखकर आपसमें मन्त्रणा करके 'कन्याके विवाहके लिये श्रेष्ठ वरका अन्वेषण करो'—ऐसा दूतसे कहकर शीघ्र ही उसे भेज दिया। उसकी आज्ञा प्राप्त करके दूत कांचन नामक नगरमें गया और वहाँसे एक वणिक्‌का पुत्र लेकर आया। [उस] साधुने उस वणिक्‌के पुत्रको सुन्दर और गुणोंसे सम्पन्न देखकर अपनी जातिके लोगों तथा बन्धु-बान्धवोंके साथ संतुष्टचित्त हो विधि-विधानसे वणिक्‌पुत्रके हाथमें कन्याका दान कर दिया॥ १५—२०॥

ततोऽभाग्यवशात् तेन विस्मृतं व्रतमुत्तमम्। विवाहसमये तस्यास्तेन रुष्टोऽभवत् प्रभुः॥ २१॥
ततः कालेन नियतो निजकर्मविशारदः। वाणिज्यार्थं ततः शीघ्रं जामातृसहितो वणिक्॥ २२॥
रत्नसारपुरे रम्ये गत्वा सिन्धुसमीपतः। वाणिज्यमकरोत् साधुर्जामात्रा श्रीमता सह॥ २३॥
तौ गतौ नगरे रम्ये चन्द्रकेतोर्नृपस्य च। एतस्मिन्नेव काले तु सत्यनारायणः प्रभुः॥ २४॥
भ्रष्टप्रतिज्ञमालोक्य शापं तस्मै प्रदत्तवान्। दारुणं कठिनं चास्य महद् दुःखं भविष्यति॥ २५॥

उस समय वह (साधु वणिक्) दुर्भाग्यवश भगवान्‌का वह उत्तम व्रत भूल गया। [पूर्व-संकल्पके अनुसार] विवाहके समयमें व्रत न करनेके कारण भगवान् उसपर रुष्ट हो गये। कुछ समयके पश्चात् अपने व्यापारकर्ममें कुशल वह साधु वणिक् कालकी प्रेरणासे अपने दामादके साथ व्यापार करनेके लिये समुद्रके समीप स्थित रत्नसारपुर

नामक सुन्दर नगरमें गया और अपने श्रीसम्पन्न दामादके साथ वहाँ व्यापार करने लगा। तदनन्तर वे दोनों राजा चन्द्रकेतुके रमणीय उस नगरमें गये। उसी समय भगवान् श्रीसत्यनारायणने उसे भ्रष्टप्रतिज्ञ देखकर 'इसे दारुण, कठिन और महान् दुःख प्राप्त होगा'—यह शाप दे दिया॥ २१—२५॥

एकस्मिन् दिवसे राज्ञो धनमादाय तस्करः। तत्रैव चागतश्चौरो वणिजौ यत्र संस्थितौ॥ २६॥
तत्पश्चाद् धावकान् दूतान् दृष्ट्वा भीतेन चेतसा। धनं संस्थाप्य तत्रैव स तु शीघ्रमलक्षितः॥ २७॥
ततो दूताः समायाता यत्रास्ते सज्जनो वणिक्। दृष्ट्वा नृपधनं तत्र बद्ध्वाऽऽनीतौ वणिक्सुतौ॥ २८॥
हर्षेण धावमानाश्च प्रोचुर्नृपसमीपतः। तस्करौ द्वौ समानीतौ विलोक्याज्ञापय प्रभो॥ २९॥
राज्ञाऽऽज्ञप्तास्ततः शीघ्रं दृढं बध्वा तु तावुभौ। स्थापितौ द्वौ महादुर्गे कारागारेऽविचारतः॥ ३०॥
मायया सत्यदेवस्य न श्रुतं कैस्तयोर्वचः। अतस्तयोर्धनं राज्ञा गृहीतं चन्द्रकेतुना॥ ३१॥

एक दिन एक चोर राजा (चन्द्रकेतु)-के धनको चुराकर वहीं आया, जहाँ दोनों वणिक् स्थित थे। वह अपने पीछे दौड़ते हुए दूतोंको देखकर भयभीतचित्तसे धन वहीं छोड़कर शीघ्र ही छिप गया। इसके बाद राजाके दूत वहाँ आ गये जहाँ वह साधु वणिक् था। वहाँ राजाके धनको देखकर वे दूत उन दोनों वणिक्पुत्रोंको बाँधकर ले आये और हर्षपूर्वक दौड़ते हुए राजासे बोले—'प्रभो! हम दो चोर पकड़ लाये हैं, इन्हें देखकर आप आज्ञा दें'। राजाकी

आज्ञासे दोनों शीघ्र ही दृढ़तापूर्वक बाँधकर बिना विचार किये महान् कारागारमें डाल दिये गये। भगवान् सत्यदेवकी मायासे किसीने उन दोनोंकी बात नहीं सुनी और राजा चन्द्रकेतुने उन दोनोंका धन भी ले लिया॥ २६—३१॥

तच्छापाच्च तयोर्गेहे भार्या चैवातिदुःखिता। चौरेणापहृतं सर्वं गृहे यच्च स्थितं धनम्॥ ३२॥
आधिव्याधिसमायुक्ता क्षुत्पिपासातिदुःखिता। अन्नचिन्तापरा भूत्वा बभ्राम च गृहे गृहे॥ ३३॥
कलावती तु कन्यापि बभ्राम प्रतिवासरम्।
एकस्मिन् दिवसे याता क्षुधार्ता द्विजमन्दिरम्। गत्वाऽपश्यद् व्रतं तत्र सत्यनारायणस्य च॥ ३४॥
उपविश्य कथां श्रुत्वा वरं प्रार्थितवत्यपि। प्रसादभक्षणं कृत्वा ययौ रात्रौ गृहं प्रति॥ ३५॥

उन [भगवान्]-के शापसे वणिक्के घरमें उसकी भार्या भी अत्यन्त दुःखित हो गयी और उनके घरमें सारा-का-सारा जो धन था, वह चोरने चुरा लिया। वह (लीलावती) शारीरिक तथा मानसिक पीडाओंसे युक्त, भूख और प्याससे दुःखी हो अन्नकी चिन्तासे दर-दर भटकने लगी। कलावती कन्या भी [भोजनके लिये इधर-उधर] प्रतिदिन घूमने लगी। एक दिन क्षुधासे पीडित हो वह (कलावती) एक ब्राह्मणके घर गयी। वहाँ जाकर उसने श्रीसत्यनारायणके व्रत-पूजनको देखा। वहाँ बैठकर उसने कथा सुनी और वरदान माँगा। तदनन्तर प्रसाद ग्रहण करके वह कुछ रात होनेपर घर गयी॥ ३२—३५॥

माता कलावतीं कन्यां कथयामास प्रेमतः। पुत्रि रात्रौ स्थिता कुत्र किं ते मनसि वर्तते॥ ३६॥
कन्या कलावती प्राह मातरं प्रति सत्वरम्। द्विजालये व्रतं मातर्दृष्टं वाञ्छितसिद्धिदम्॥ ३७॥
तच्छ्रुत्वा कन्यकावाक्यं व्रतं कर्तुं समुद्यता। सा मुदा तु वणिग्भार्या सत्यनारायणस्य च॥ ३८॥
व्रतं चक्रे सैव साध्वी बन्धुभिः स्वजनैः सह। भर्तृजामातरौ क्षिप्रमागच्छेतां स्वमाश्रमम्॥ ३९॥
अपराधं च मे भर्तुर्जामातुः क्षन्तुमर्हसि। व्रतेनानेन तुष्टोऽसौ सत्यनारायणः पुनः॥ ४०॥
दर्शयामास स्वप्नं हि चन्द्रकेतुं नृपोत्तमम्। वन्दिनौ मोचय प्रातर्वणिजौ नृपसत्तम॥ ४१॥
देयं धनं च तत्सर्वं गृहीतं यत् त्वयाऽधुना। नो चेत् त्वां नाशयिष्यामि सराज्यधनपुत्रकम्॥ ४२॥

माता [लीलावती]-ने कलावती कन्यासे प्रेमपूर्वक पूछा—पुत्रि! रातमें तू कहाँ रुक गयी थी? तुम्हारे मनमें क्या है? कलावती कन्याने तुरंत मातासे कहा—माँ! मैंने एक ब्राह्मणके घरमें मनोरथ प्रदान करनेवाला व्रत देखा है। कन्याकी उस बातको सुनकर वह वणिक्‌की भार्या व्रत करनेको उद्यत हुई और प्रसन्नमनसे उस साध्वीने बन्धु-बान्धवोंके साथ भगवान् श्रीसत्यनारायणका व्रत किया तथा इस प्रकार प्रार्थना की—'भगवन्! आप हमारे पति एवं जामाताके अपराधको क्षमा करें। वे दोनों अपने घर शीघ्र आ जायँ।' इस व्रतसे भगवान् सत्यनारायण पुनः संतुष्ट हो गये तथा उन्होंने नृपश्रेष्ठ चन्द्रकेतुको स्वप्न दिखाया और [स्वप्नमें] कहा—'नृपश्रेष्ठ! प्रातःकाल

दोनों वणिकोंको छोड़ दो और वह सारा धन भी दे दो, जो तुमने उनसे इस समय ले लिया है; अन्यथा राज्य, धन एवं पुत्रसहित तुम्हारा सर्वनाश कर दूँगा'॥ ३६—४२॥

एवमाभाष्य राजानं ध्यानगम्योऽभवत् प्रभुः। ततः प्रभातसमये राजा च स्वजनैः सह॥ ४३॥
उपविश्य सभामध्ये प्राह स्वप्नं जनं प्रति। बद्धौ महाजनौ शीघ्रं मोचय द्वौ वणिक्सुतौ॥ ४४॥
इति राज्ञो वचः श्रुत्वा मोचयित्वा महाजनौ। समानीय नृपस्याग्रे प्राहुस्ते विनयान्विताः॥ ४५॥
आनीतौ द्वौ वणिक्पुत्रौ मुक्तौ निगडबन्धनात्। ततो महाजनौ नत्वा चन्द्रकेतुं नृपोत्तमम्॥ ४६॥
स्मरन्तौ पूर्ववृत्तान्तं नोचतुर्भयविह्वलौ। राजा वणिक्सुतौ वीक्ष्य वचः प्रोवाच सादरम्॥ ४७॥

राजासे स्वप्नमें ऐसा कहकर भगवान् सत्यनारायण अन्तर्धान हो गये। इसके अनन्तर प्रातःकाल राजाने अपने सभासदोंके साथ सभाके मध्य बैठकर अपना स्वप्न लोगोंको बताया और कहा—'दोनों बंदी वणिक्पुत्रोंको शीघ्र ही मुक्त कर दो'। राजाकी ऐसी बात सुनकर वे राजपुरुष दोनों महाजनोंको बन्धनमुक्त करके राजाके सामने लाकर विनयपूर्वक बोले—महाराज! बेड़ी-बन्धनसे मुक्त करके दोनों वणिक्पुत्र लाये गये हैं। इसके बाद दोनों महाजन (वणिक्पुत्र) नृपश्रेष्ठ चन्द्रकेतुको प्रणाम करके अपने पूर्व-वृत्तान्तका स्मरण करते हुए भयविह्वल हो गये और कुछ बोल न सके। राजाने वणिक्पुत्रोंको देखकर आदरपूर्वक कहा—॥ ४३—४७॥

दैवात् प्राप्तं महद्दुःखमिदानीं नास्ति वै भयम्। तदा निगडसंत्यागं क्षौरकर्माद्यकारयत्॥ ४८॥
वस्त्रालङ्कारकं दत्त्वा परितोष्य नृपश्च तौ। पुरस्कृत्य वणिक्पुत्रौ वचसाऽतोषयद् भृशम्॥ ४९॥
पुरानीतं तु यद् द्रव्यं द्विगुणीकृत्य दत्तवान्। प्रोवाच च ततो राजा गच्छ साधो निजाश्रमम्॥ ५०॥
राजानं प्रणिपत्याह गन्तव्यं त्वत्प्रसादतः। इत्युक्त्वा तौ महावैश्यौ जग्मतुः स्वगृहं प्रति॥ ५१॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां तृतीयोऽध्यायः॥ ३॥

'आपलोगोंको प्रारब्धवश यह महान् दुःख प्राप्त हुआ है, इस समय अब कोई भय नहीं है', ऐसा कहकर उनकी बेड़ी खुलवाकर क्षौरकर्म आदि कराया। राजाने वस्त्र, अलंकार देकर उन दोनों वणिक्पुत्रोंको संतुष्ट किया तथा सामने बुलाकर वाणीद्वारा अत्यधिक आनन्दित किया। पहले जो धन लिया था, उसे दूना करके दिया; तदनन्तर राजाने पुनः उनसे कहा—'साधो! अब आप अपने घरको जायँ'। राजाको प्रणाम करके 'आपकी कृपासे हम जा रहे हैं'—ऐसा कहकर उन दोनों महावैश्योंने अपने घरकी ओर प्रस्थान किया॥ ४८—५१॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दपुराणके अन्तर्गत रेवाखण्डमें श्रीसत्यनारायणव्रतकथाका यह तीसरा अध्याय पूरा हुआ॥ ३॥

□□

चौथा अध्याय

असत्य भाषण तथा भगवान्‌के प्रसादकी अवहेलनाका परिणाम

सूत उवाच

यात्रां तु कृतवान् साधुर्मङ्गलायनपूर्विकाम्। ब्राह्मणेभ्यो धनं दत्त्वा तदा तु नगरं ययौ॥ १॥
कियद् दूरे गते साधौ सत्यनारायणः प्रभुः। जिज्ञासां कृतवान् साधो किमस्ति तव नौस्थितम्॥ २॥
ततो महाजनौ मत्तौ हेलया च प्रहस्य वै। कथं पृच्छसि भो दण्डिन् मुद्रां नेतुं किमिच्छसि॥ ३॥
लतापत्रादिकं चैव वर्तते तरणौ मम। निष्ठुरं च वचः श्रुत्वा सत्यं भवतु ते वचः॥ ४॥
एवमुक्त्वा गतः शीघ्रं दण्डी तस्य समीपतः। कियद् दूरे ततो गत्वा स्थितः सिन्धुसमीपतः॥ ५॥

श्रीसूतजी बोले—साधु [वणिक्] मंगलाचरण कर और ब्राह्मणोंको धन देकर अपने नगरके लिये चल पड़ा। साधुके कुछ दूर जानेपर भगवान् सत्यनारायणकी [उसकी सत्यताकी परीक्षाके विषयमें] जिज्ञासा हुई—'साधो! तुम्हारी नावमें क्या भरा है'? तब धनके मदमें चूर दोनों महाजनोंने अवहेलनापूर्वक हँसते हुए कहा—'दण्डिन्! क्यों पूछ रहे हो? क्या कुछ द्रव्य लेनेकी इच्छा है? हमारी नावमें तो लता और पत्ते आदि भरे हैं।' ऐसी निष्ठुर

वाणी सुनकर—'तुम्हारी बात सच हो जाय'—ऐसा कहकर दण्डी संन्यासीका रूप धारण किये हुए भगवान् कुछ दूर जाकर समुद्रके समीप बैठ गये॥ १—५॥

गते दण्डिनि साधुश्च कृतनित्यक्रियस्तदा। उत्थितां तरणीं दृष्ट्वा विस्मयं परमं ययौ॥ ६॥
दृष्ट्वा लतादिकं चैव मूर्च्छितो न्यपतद् भुवि। लब्धसंज्ञो वणिक्पुत्रस्ततश्चिन्तान्वितोऽभवत्॥ ७॥
तदा तु दुहितुः कान्तो वचनं चेदमब्रवीत्। किमर्थं क्रियते शोकः शापो दत्तश्च दण्डिना॥ ८॥
शक्यते तेन सर्वं हि कर्तुं चात्र न संशयः। अतस्तच्छरणं यामो वाञ्छितार्थो भविष्यति॥ ९॥
जामातुर्वचनं श्रुत्वा तत्सकाशं गतस्तदा। दृष्ट्वा च दण्डिनं भक्त्या नत्वा प्रोवाच सादरम्॥ १०॥
क्षमस्व चापराधं मे यदुक्तं तव सन्निधौ। एवं पुनः पुनर्नत्वा महाशोकाकुलोऽभवत्॥ ११॥

दण्डीके चले जानेपर नित्यक्रिया करनेके पश्चात् उतराई हुई (जलमें ऊपरकी ओर उठी हुई) नौकाको देखकर साधु [वणिक्] अत्यन्त आश्चर्यमें पड़ गया और नावमें लता और पत्ते आदिको देखकर मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़ा। सचेत होनेपर वणिक्पुत्र चिन्तित हो गया। तब उसके दामादने इस प्रकार कहा—'आप शोक क्यों करते हैं? दण्डीने शाप दे दिया है, इस स्थितिमें वे ही [चाहें तो] सब कुछ कर सकते हैं, इसमें संशय नहीं। अतः उन्हींकी शरणमें हम चलें, वहीं मनकी इच्छा पूर्ण होगी'। दामाद (जामाता)-की बात सुनकर वह [साधु वणिक्] उनके पास गया और वहाँ दण्डीको देखकर उसने भक्तिपूर्वक उन्हें प्रणाम किया तथा आदरपूर्वक कहने लगा—आपके

सम्मुख मैंने जो कुछ कहा है (असत्यभाषणरूप अपराध किया है), आप मेरे उस अपराधको क्षमा करें—ऐसा कहकर बारम्बार प्रणाम करके वह महान् शोकसे आकुल हो गया॥ ६—११॥

प्रोवाच वचनं दण्डी विलपन्तं विलोक्य च। मा रोदीः शृणु मद्वाक्यं मम पूजाबहिर्मुखः॥ १२॥
ममाज्ञया च दुर्बुद्धे लब्धं दुःखं मुहुर्मुहुः। तच्छ्रुत्वा भगवद्वाक्यं स्तुतिं कर्तुं समुद्यतः॥ १३॥

दण्डीने उसे रोता हुआ देखकर कहा—'हे मूर्ख! रोओ मत, मेरी बात सुनो। मेरी पूजासे उदासीन होनेके कारण तथा मेरी आज्ञासे ही तुमने बारम्बार दुःख प्राप्त किया है।' भगवान्‌की ऐसी वाणी सुनकर वह उनकी स्तुति करने लगा—॥ १२-१३॥

साधुरुवाच

त्वन्मायामोहिताः सर्वे ब्रह्माद्यास्त्रिदिवौकसः। न जानन्ति गुणान् रूपं तवाश्चर्यमिदं प्रभो॥ १४॥
मूढोऽहं त्वां कथं जाने मोहितस्तव मायया। प्रसीद पूजयिष्यामि यथाविभवविस्तरैः॥ १५॥
पुरा वित्तं च तत् सर्वं त्राहि मां शरणागतम्। श्रुत्वा भक्तियुतं वाक्यं परितुष्टो जनार्दनः॥ १६॥

साधुने कहा—'हे प्रभो! यह आश्चर्यकी बात है कि आपकी मायासे मोहित होनेके कारण ब्रह्मा आदि देवता भी आपके गुणों और रूपको यथावत् रूपसे नहीं जान पाते, फिर मैं मूर्ख आपकी मायासे मोहित होनेके

कारण कैसे जान सकता हूँ! आप प्रसन्न हों। मैं अपनी धन-सम्पत्तिके अनुसार आपकी पूजा करूँगा। मैं आपकी शरणमें आया हूँ। मेरा जो [नौकामें स्थित] पुराना धन था, उसकी तथा मेरी रक्षा करें।' उस (वणिक्)-की भक्तियुक्त वाणी सुनकर भगवान् जनार्दन संतुष्ट हो गये॥ १४—१६॥

वरं च वाञ्छितं दत्त्वा तत्रैवान्तर्दधे हरिः। ततो नावं समारुह्य दृष्ट्वा वित्तप्रपूरिताम्॥ १७॥
कृपया सत्यदेवस्य सफलं वाञ्छितं मम। इत्युक्त्वा स्वजनैः सार्धं पूजां कृत्वा यथाविधि॥ १८॥
हर्षेण चाभवत् पूर्णः सत्यदेवप्रसादतः। नावं संयोज्य यत्नेन स्वदेशगमनं कृतम्॥ १९॥
साधुर्जामातरं प्राह पश्य रत्नपुरीं मम। दूतं च प्रेषयामास निजवित्तस्य रक्षकम्॥ २०॥

भगवान् हरि उसे अभीष्ट वर प्रदान करके वहीं अन्तर्धान हो गये। उसके बाद वह साधु अपनी नौकामें चढ़ा और उसे धन-धान्यसे परिपूर्ण देखकर 'भगवान् सत्यदेवकी कृपासे हमारा मनोरथ सफल हो गया'—ऐसा कहकर स्वजनोंके साथ उसने भगवान्‌की विधिवत् पूजा की। भगवान् श्रीसत्यनारायणकी कृपासे वह आनन्दसे परिपूर्ण हो गया और नावको प्रयत्नपूर्वक सँभालकर उसने अपने देशके लिये प्रस्थान किया। साधु (वणिक्)-ने अपने दामादसे कहा—'वह देखो मेरी रत्नपुरी नगरी दिखायी दे रही है'। इसके बाद उसने अपने धनके रक्षक दूतको अपने आगमनका समाचार देनेके लिये अपनी नगरीमें भेजा॥ १७—२०॥

तनोऽसौ नगरं गत्वा साधुभार्यां विलोक्य च। प्रोवाच वाञ्छितं वाक्यं नत्वा बद्धाञ्जलिस्तदा॥ २१॥
निकटे नगरस्यैव जामात्रा सहितो वणिक्। आगतो बन्धुवर्गैश्च वित्तैश्च बहुभिर्युतः॥ २२॥
श्रुत्वा दूतमुखाद् वाक्यं महाहर्षवती सती। सत्यपूजां ततः कृत्वा प्रोवाच तनुजां प्रति॥ २३॥
व्रजामि शीघ्रमागच्छ साधुसंदर्शनाय च। इति मातृवचः श्रुत्वा व्रतं कृत्वा समाप्य च॥ २४॥
प्रसादं च परित्यज्य गता साऽपि पतिं प्रति। तेन रुष्टः सत्यदेवो भर्तारं तरणिं तथा॥ २५॥
संहृत्य च धनैः सार्धं जले तस्यावमज्जयत्।

तत्पश्चात् उस दूतने नगरमें जाकर साधुकी भार्याको देख हाथ जोड़कर प्रणाम किया तथा उसके लिये अभीष्ट बात कही—'सेठजी अपने दामाद तथा बन्धुवर्गोंके साथ बहुत सारे धन-धान्यसे सम्पन्न होकर नगरके निकट पधार गये हैं।' दूतके मुखसे यह बात सुनकर वह महान् आनन्दसे विह्वल हो गयी और उस साध्वीने श्रीसत्यनारायणकी पूजा करके अपनी पुत्रीसे कहा—'मैं साधुके दर्शनके लिये जा रही हूँ, तुम शीघ्र आओ।' माताका ऐसा वचन सुनकर व्रतको समाप्त करके प्रसादका परित्याग कर वह (कलावती) भी (अपने) पतिका दर्शन करनेके लिये चल पड़ी। इससे भगवान् सत्यनारायण रुष्ट हो गये और उन्होंने उसके पतिको तथा नौकाको धनके साथ हरण करके जलमें डुबो दिया॥ २१—२५१/२॥

ततः कलावती कन्या न विलोक्य निजं पतिम्॥ २६॥
शोकेन महता तत्र रुदन्ती चापतद् भुवि। दृष्ट्वा तथाविधां नावं कन्यां च बहुदुःखिताम्॥ २७॥

भीतेन मनसा साधुः किमाश्चर्यमिदं भवेत्। चिन्त्यमानाश्च ते सर्वे बभूवुस्तरिवाहकाः॥ २८॥
ततो लीलावती कन्यां दृष्ट्वा सा विह्वलाऽभवत्। विललापातिदुःखेन भर्तारं चेदमब्रवीत्॥ २९॥
इदानीं नौकया सार्धं कथं सोऽभूदलक्षितः। न जाने कस्य देवस्य हेलया चैव सा हृता॥ ३०॥
सत्यदेवस्य माहात्म्यं ज्ञातुं वा केन शक्यते। इत्युक्त्वा विललापैव ततश्च स्वजनैः सह॥ ३१॥
ततो लीलावती कन्यां क्रोडे कृत्वा रुरोद ह।

इसके बाद कलावती कन्या अपने पतिको न देख महान् शोकसे रुदन करती हुई पृथ्वीपर गिर पड़ी। नावका अदर्शन तथा कन्याको अत्यन्त दुःखी देख भयभीत मनसे साधु [वणिक्]-ने सोचा—यह क्या आश्चर्य हो गया? नावका संचालन करनेवाले भी सभी चिन्तित हो गये। तदनन्तर वह लीलावती भी कन्याको देखकर विह्वल हो गयी और अत्यन्त दुःखसे विलाप करती हुई अपने पतिसे इस प्रकार बोली—'अभी-अभी नौकाके साथ वह (दामाद) कैसे अलक्षित हो गया, न जाने किस देवताकी उपेक्षासे वह नौका हरण कर ली गयी अथवा श्रीसत्यनारायणका माहात्म्य कौन जान सकता है!' ऐसा कहकर वह स्वजनोंके साथ विलाप करने लगी और कलावती कन्याको गोदमें लेकर रोने लगी॥ २६—३१½॥

ततः कलावती कन्या नष्टे स्वामिनि दुःखिता॥ ३२॥
गृहीत्वा पादुके तस्यानुगन्तुं च मनोदधे। कन्यायाश्चरितं दृष्ट्वा सभार्यः सज्जनो वणिक्॥ ३३॥
अतिशोकेन संतप्तश्चिन्तयामास धर्मवित्। हृतं वा सत्यदेवेन भ्रान्तोऽहं सत्यमायया॥ ३४॥

सत्यपूजां करिष्यामि यथाविभवविस्तरैः। इति सर्वान् समाहूय कथयित्वा मनोरथम्॥ ३५॥
नत्वा च दण्डवद् भूमौ सत्यदेवं पुनः पुनः। ततस्तुष्टः सत्यदेवो दीनानां परिपालकः॥ ३६॥
जगाद वचनं चैनं कृपया भक्तवत्सलः। त्यक्त्वा प्रसादं ते कन्या पतिं द्रष्टुं समागता॥ ३७॥
अतोऽदृष्टोऽभवत् तस्याः कन्यकायाः पतिर्ध्रुवम्। गृहं गत्वा प्रसादं च भुक्त्वा साऽऽयाति चेत् पुनः॥ ३८॥
लब्धभर्त्री सुता साधो भविष्यति न संशयः।

कलावती कन्या भी अपने पतिके नष्ट हो जानेपर दुःखी हो गयी और पतिकी पादुका लेकर उनका अनुगमन करनेके लिये उसने मनमें निश्चय किया। कन्याके इस प्रकारके आचरणको देख भार्यासहित वह धर्मज्ञ साधु वणिक् अत्यन्त शोक-संतप्त हो गया और सोचने लगा—या तो भगवान् सत्यनारायणने यह [दामादके साथ धन-धान्यसे भरी इस नौकाका] अपहरण किया है अथवा हम सभी भगवान् सत्यदेवकी मायासे मोहित हो गये हैं। 'अपनी धन-शक्तिके अनुसार मैं भगवान् सत्यनारायणकी पूजा करूँगा'—सभीको बुलाकर इस प्रकार कहकर उसने अपने मनकी इच्छा प्रकट की और बारम्बार भगवान् सत्यदेवको दण्डवत् प्रणाम किया। इससे दीनोंके परिपालक भगवान् सत्यदेव प्रसन्न हो गये। भक्तवत्सल भगवान्‌ने कृपापूर्वक कहा—'तुम्हारी कन्या प्रसाद छोड़कर अपने पतिको देखने चली आयी है, निश्चय ही इसी कारण उसका पति अदृश्य हो गया है। यदि घर जाकर प्रसाद ग्रहण करके वह पुनः आये तो हे साधो! तुम्हारी पुत्री पतिको प्राप्त करेगी—इसमें संशय नहीं'॥ ३२—३८½॥

कन्यका तादृशं वाक्यं श्रुत्वा गगनमण्डलात्॥ ३९॥
क्षिप्रं तदा गृहं गत्वा प्रसादं च बुभोज सा। पश्चात् सा पुनरागत्य ददर्श स्वजनं पतिम्॥ ४०॥
ततः कलावती कन्या जगाद पितरं प्रति। इदानीं च गृहं याहि विलम्बं कुरुषे कथम्॥ ४१॥
तच्छ्रुत्वा कन्यकावाक्यं संतुष्टोऽभूद् वणिक्सुतः। पूजनं सत्यदेवस्य कृत्वा विधिविधानतः॥ ४२॥
धनैर्बन्धुगणैः सार्धं जगाम निजमन्दिरम्। पौर्णमास्यां च संक्रान्तौ कृतवान् सत्यस्य पूजनम्॥ ४३॥
इहलोके सुखं भुक्त्वा चान्ते सत्यपुरं ययौ॥ ४४॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां चतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

कन्या (कलावती) भी आकाशमण्डलसे ऐसी वाणी सुनकर शीघ्र ही घर गयी और उसने प्रसाद ग्रहण किया। पुनः आकर स्वजनों तथा अपने पतिको देखा। तब कलावती कन्याने अपने पितासे कहा—'अब तो घर चलें, विलम्ब क्यों कर रहे हैं?' कन्याकी वह बात सुनकर वणिक्पुत्र संतुष्ट हो गया और विधि-विधानसे भगवान् सत्यनारायणका पूजन करके धन तथा बन्धु-बान्धवोंके साथ अपने घर गया। तदनन्तर पूर्णिमा तथा संक्रान्ति-पर्वोंपर भगवान् सत्यनारायणका पूजन करते हुए इस लोकमें सुख भोगकर अन्तमें वह सत्यपुर (वैकुण्ठलोक)-में चला गया॥ ३९—४४॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दपुराणके अन्तर्गत रेवाखण्डमें श्रीसत्यनारायणव्रतकथाका यह चौथा अध्याय पूरा हुआ॥ ४॥

❑❑

पाँचवाँ अध्याय

राजा तुंगध्वज और गोपगणोंकी कथा

सूत उवाच

अथान्यच्च प्रवक्ष्यामि शृणुध्वं मुनिसत्तमाः। आसीत् तुङ्गध्वजो राजा प्रजापालनतत्परः॥ १॥
प्रसादं सत्यदेवस्य त्यक्त्वा दुःखमवाप सः। एकदा स वनं गत्वा हत्वा बहुविधान् पशून्॥ २॥
आगत्य वटमूलं च दृष्ट्वा सत्यस्य पूजनम्। गोपाः कुर्वन्ति संतुष्टा भक्तियुक्ताः सबान्धवाः॥ ३॥
राजा दृष्ट्वा तु दर्पेण न गतो न ननाम सः। ततो गोपगणाः सर्वे प्रसादं नृपसंनिधौ॥ ४॥
संस्थाप्य पुनरागत्य भुक्त्वा सर्वे यथेप्सितम्। ततः प्रसादं संत्यज्य राजा दुःखमवाप सः॥ ५॥

श्रीसूतजी बोले—श्रेष्ठ मुनियो! अब इसके बाद मैं दूसरी कथा कहूँगा, आपलोग सुनें। अपनी प्रजाका पालन करनेमें तत्पर तुंगध्वज नामक एक राजा था। उसने सत्यदेवके प्रसादका परित्याग करके दुःख प्राप्त किया। एक बार वह वनमें जाकर और वहाँ बहुत-से पशुओंको मारकर वटवृक्षके नीचे आया। वहाँ उसने देखा कि गोपगण बन्धु-बान्धवोंके साथ संतुष्ट होकर भक्तिपूर्वक भगवान् सत्यदेवकी पूजा कर रहे हैं। राजा यह देखकर भी

अहंकारवश न तो वहाँ गया और न उसने भगवान् सत्यनारायणको प्रणाम ही किया। इसके बाद (पूजनके अनन्तर) सभी गोपगण भगवान्का प्रसाद राजाके समीप रखकर वहाँसे लौट आये और इच्छानुसार उन सभीने भगवान्का प्रसाद ग्रहण किया। इधर राजाको प्रसादका परित्याग करनेसे बहुत दुःख हुआ॥ १—५॥

तस्य पुत्रशतं नष्टं धनधान्यादिकं च यत्। सत्यदेवेन तत्सर्वं नाशितं मम निश्चितम्॥ ६॥
अतस्तत्रैव गच्छामि यत्र देवस्य पूजनम्। मनसा तु विनिश्चित्य ययौ गोपालसन्निधौ॥ ७॥
ततोऽसौ सत्यदेवस्य पूजां गोपगणैः सह। भक्तिश्रद्धान्वितो भूत्वा चकार विधिना नृपः॥ ८॥
सत्यदेवप्रसादेन धनपुत्रान्वितोऽभवत्। इहलोके सुखं भुक्त्वा चान्ते सत्यपुरं ययौ॥ ९॥

उसका सम्पूर्ण धन-धान्य एवं सभी सौ पुत्र नष्ट हो गये। राजाने मनमें यह निश्चय किया कि अवश्य ही भगवान् सत्यनारायणने हमारा नाश कर दिया है। इसलिये मुझे वहीं जाना चाहिये जहाँ श्रीसत्यनारायणका पूजन हो रहा था। ऐसा मनमें निश्चय करके वह राजा गोपगणोंके समीप गया और उसने गोपगणोंके साथ भक्ति-श्रद्धासे युक्त होकर विधिपूर्वक भगवान् सत्यदेवकी पूजा की। भगवान् सत्यदेवकी कृपासे वह पुनः धन और पुत्रोंसे सम्पन्न हो गया तथा इस लोकमें सभी सुखोंका उपभोग कर अन्तमें सत्यपुर (वैकुण्ठलोक)-को प्राप्त हुआ॥ ६—९॥

य इदं कुरुते सत्यव्रतं परमदुर्लभम्। शृणोति च कथां पुण्यां भक्तियुक्तः फलप्रदाम्॥ १०॥
धनधान्यादिकं तस्य भवेत् सत्यप्रसादतः। दरिद्रो लभते वित्तं बद्धो मुच्येत बन्धनात्॥ ११॥
भीतो भयात् प्रमुच्येत सत्यमेव न संशयः। ईप्सितं च फलं भुक्त्वा चान्ते सत्यपुरं व्रजेत्॥ १२॥
इति वः कथितं विप्राः सत्यनारायणव्रतम्। यत् कृत्वा सर्वदुःखेभ्यो मुक्तो भवति मानवः॥ १३॥

[श्रीसूतजी कहते हैं—]जो व्यक्ति इस परम दुर्लभ श्रीसत्यनारायणके व्रतको करता है और पुण्यमयी तथा फलप्रदायिनी भगवान्की कथाको भक्तियुक्त होकर सुनता है, उसे भगवान् सत्यनारायणकी कृपासे धन-धान्य आदिकी प्राप्ति होती है। दरिद्र धनवान् हो जाता है, बन्धनमें पड़ा हुआ बन्धनसे मुक्त हो जाता है, डरा हुआ व्यक्ति भयसे मुक्त हो जाता है—यह सत्य बात है, इसमें संशय नहीं। [इस लोकमें वह] सभी ईप्सित फलोंका भोग प्राप्त करके अन्तमें सत्यपुर (वैकुण्ठलोक)-को जाता है। हे ब्राह्मणो! इस प्रकार मैंने आपलोगोंसे भगवान् सत्यनारायणके व्रतको कहा, जिसे करके मनुष्य सभी दुःखोंसे मुक्त हो जाता है॥ १०—१३॥

विशेषतः कलियुगे सत्यपूजा फलप्रदा। केचित् कालं वदिष्यन्ति सत्यमीशं तमेव च॥ १४॥
सत्यनारायणं केचित् सत्यदेवं तथापरे। नानारूपधरो भूत्वा सर्वेषामीप्सितप्रदम्॥ १५॥
भविष्यति कलौ सत्यव्रतरूपी सनातनः। श्रीविष्णुना धृतं रूपं सर्वेषामीप्सितप्रदम्॥ १६॥

य इदं पठते नित्यं शृणोति मुनिसत्तमाः। तस्य नश्यन्ति पापानि सत्यदेवप्रसादतः॥ १७॥
व्रतं यैस्तु कृतं पूर्वं सत्यनारायणस्य च। तेषां त्वपरजन्मानि कथयामि मुनीश्वराः॥ १८॥

कलियुगमें तो भगवान् सत्यदेवकी पूजा विशेष फल प्रदान करनेवाली है। भगवान् विष्णुको ही कुछ लोग काल, कुछ लोग सत्य, कोई ईश और कोई सत्यदेव तथा दूसरे लोग सत्यनारायण नामसे कहेंगे। अनेक रूप धारण करके भगवान् सत्यनारायण सभीका मनोरथ सिद्ध करते हैं। कलियुगमें सनातन भगवान् विष्णु ही सत्यव्रत-रूप धारण करके सभीका मनोरथ पूर्ण करनेवाले होंगे। हे श्रेष्ठ मुनियो! जो व्यक्ति नित्य भगवान् सत्यनारायणकी इस व्रत-कथाको पढ़ता है, सुनता है, भगवान् सत्यनारायणकी कृपासे उसके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। हे मुनीश्वरो! पूर्वकालमें जिन लोगोंने भगवान् सत्यनारायणका व्रत किया था, उनके अगले जन्मका वृत्तान्त कहता हूँ, आपलोग सुनें॥ १४—१८॥

शतानन्दो महाप्राज्ञः सुदामा ब्राह्मणो ह्यभूत्। तस्मिञ्जन्मनि श्रीकृष्णं ध्यात्वा मोक्षमवाप ह॥ १९॥
काष्ठभारवहो भिल्लो गुहराजो बभूव ह। तस्मिञ्जन्मनि श्रीरामं सेव्य मोक्षं जगाम वै॥ २०॥
उल्कामुखो महाराजो नृपो दशरथोऽभवत्। श्रीरङ्गनाथं सम्पूज्य श्रीवैकुण्ठं तदागमत्॥ २१॥
धार्मिकः सत्यसन्धश्च साधुर्मोरध्वजोऽभवत्। देहार्धं क्रकचैश्छित्त्वा दत्त्वा मोक्षमवाप ह॥ २२॥

तुङ्गध्वजो महाराजः स्वायम्भुवोऽभवत् किल। सर्वान् भागवतान् कृत्वा श्रीवैकुण्ठं तदाऽगमत्॥ २३॥
भूत्वा गोपाश्च ते सर्वे व्रजमण्डलवासिनः। निहत्य राक्षसान् सर्वान् गोलोकं तु तदा ययुः॥ २४॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे रेवाखण्डे श्रीसत्यनारायणव्रतकथायां पञ्चमोऽध्यायः॥ ५॥

महान् प्रज्ञासम्पन्न शतानन्द नामके ब्राह्मण [सत्यनारायणका व्रत करनेके प्रभावसे] दूसरे जन्ममें सुदामा नामक ब्राह्मण हुए और उस जन्ममें भगवान् श्रीकृष्णका ध्यान करके उन्होंने मोक्ष प्राप्त किया। लकड़हारा भिल्ल गुहोंका राजा हुआ और अगले जन्ममें उसने भगवान् श्रीरामकी सेवा करके मोक्ष प्राप्त किया। महाराज उल्कामुख [दूसरे जन्ममें] राजा दशरथ हुए, जिन्होंने श्रीरंगनाथकी पूजा करके अन्तमें वैकुण्ठ प्राप्त किया। इसी प्रकार धार्मिक और सत्यव्रती साधु [पिछले जन्मके सत्यव्रतके प्रभावसे दूसरे जन्ममें] मोरध्वज नामका राजा हुआ। उसने आरेसे चीरकर अपने पुत्रकी आधी देह भगवान् विष्णुको अर्पित कर मोक्ष प्राप्त किया। महाराज तुंगध्वज जन्मान्तरमें स्वायम्भुव मनु हुए और भगवत्सम्बन्धी सम्पूर्ण कार्योंका अनुष्ठान करके वैकुण्ठलोकको प्राप्त हुए। जो गोपगण थे, वे सब जन्मान्तरमें व्रजमण्डलमें निवास करनेवाले गोप हुए और सभी राक्षसोंका संहार करके उन्होंने भी भगवान्का शाश्वतधाम—गोलोक प्राप्त किया॥ १९—२४॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दपुराणके अन्तर्गत रेवाखण्डमें श्रीसत्यनारायणव्रतकथाका यह पाँचवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ५॥

□□

* हवन-प्रकरण *

भगवान्‌की कथा सुननेके अनन्तर हवन करनेकी भी विधि है। जो लोग हवन करना चाहें, उनके लिये यहाँ संक्षेपमें हवनकी विधि दी जा रही है। किसी पवित्र स्थानपर मिट्टीसे एक चौकोर वेदी बना लेनी चाहिये। हवनसे पूर्व हाथमें जल-अक्षत आदि लेकर इस प्रकार हवनका संकल्प करना चाहिये—

सङ्कल्प

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः पूर्वोच्चारितग्रहगणगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः अमुकोऽहं (सपत्नीकः) कृतस्य श्रीसत्यनारायणव्रतकथाकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं यथोपस्थितसामग्रीभिः होमं करिष्ये। (संकल्पका जल छोड़ दे।)

पंच-भूसंस्कार

संकल्प करनेके बाद वेदीके निम्नलिखित पाँच संस्कार करने चाहिये—

(१) **(दर्भैः परिसमुह्य)** तीन कुशोंसे वेदी अथवा ताम्रकुण्डका दक्षिणसे उत्तरकी ओर परिमार्जन करे तथा उन कुशोंको ईशान दिशामें फेंक दे। (२) **(गोमयोदकेनोपलिप्य)** गोबर और जलसे लीप दे। (३) **(स्रुवमूलेन अथवा कुशमूलेन त्रिरुल्लिख्य)** स्रुवा अथवा कुशमूलसे पश्चिमसे पूर्वकी ओर प्रादेशमात्र (दस अंगुल लम्बी) तीन रेखाएँ दक्षिणसे प्रारम्भ कर उत्तरकी ओर खींचे। (४) **(अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां मृदमुद्धृत्य)** उल्लेखनक्रमसे दक्षिण

अनामिका और अँगूठेसे रेखाओंपरसे मिट्टी निकालकर बायें हाथमें तीन बार रखकर पुनः सब मिट्टी दाहिने हाथमें रख ले और उसे उत्तरकी ओर फेंक दे (५) **(उदकेनाभ्युक्ष्य)** पुनः जलसे कुण्ड या स्थण्डिलको सींच दे।

इस प्रकार पंच-भूसंस्कार करके पवित्र अग्नि अपने दक्षिणकी ओर रखे और उस अग्निसे थोड़ा क्रव्याद-अंश निकालकर नैर्ऋत्यकोणमें रख दे। पुनः सामने रखी पवित्र अग्निको कुण्ड या स्थण्डिलपर निम्न मन्त्रसे स्थापित करे—**ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे। देवाँ २ आ सादयादिह।**

—इस मन्त्रसे अग्नि-स्थापन करनेके पश्चात् कुशोंसे परिस्तरण करे। कुण्ड या स्थण्डिलके पूर्व उत्तराग्र तीन कुश या दूर्वा रखे। दक्षिणभागमें पूर्वाग्र तीन कुश या दूर्वा रखे। पश्चिमभागमें उत्तराग्र तीन कुश या दूर्वा रखे। उत्तरभागमें पूर्वाग्र तीन कुश या दूर्वा रखे। अग्निको बाँसकी नलीसे प्रज्वलित करे। इसके बाद हाथमें पुष्प ले निम्न श्लोक पढ़कर—

सर्वतः पाणिपादश्च सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः।
विश्वरूपो महानग्निः प्रणीतः सर्वकर्मसु॥

'ॐ अग्निमावाहयामि' इस मन्त्रसे अग्निका आवाहन करे।

अग्निका ध्यान तथा पूजन—हाथ जोड़कर निम्न मन्त्रोंद्वारा बलवर्धन* नामक अग्निका ध्यान करे—

*. अलग-अलग कार्योंमें अग्निके अलग-अलग नाम होते हैं। जो कार्य करे, उसमें उसी अग्निका आवाहन-पूजन आदि करना चाहिये। 'श्रीसत्यनारायणव्रतकथा-श्रवण' एक पौष्टिक कर्म है, जो कल्याणकी अभिवृद्धि तथा अभ्युदय प्राप्त कराता है। इस पौष्टिक कर्ममें प्रयुक्त अग्निका नाम 'बलवर्धन' है—**'पौष्टिके बलवर्धनः।'**

अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम्।
सुवर्णवर्णममलं समिद्धं सर्वतोमुखम्॥

तदनन्तर '**ॐ बलवर्धननामाग्नये नमः**'—इस मन्त्रसे गन्धाक्षत, पुष्प आदि उपचारोंसे अग्निका पूजन करे और फिर हवन करे।

हवन-विधि

सर्वप्रथम प्रजापति देवताके निमित्त आहुति दी जाती है। तदनन्तर इन्द्र, अग्नि तथा सोम देवताको आहुति देनेका विधान है। इन चार आहुतियोंमें प्रथम दो आहुतियाँ 'आघार' नामवाली हैं और तीसरी तथा चौथी आहुति 'आज्यभाग' नामसे कही जाती है। ये चारों आहुतियाँ घीसे देनी चाहिये।

दाहिना घुटना पृथ्वीपर लगाकर स्त्रुवामें घी लेकर प्रजापति देवताका ध्यान करके निम्न मन्त्रका मनसे उच्चारण कर प्रज्वलित अग्निमें आहुति दे।

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा*, **इदं प्रजापतये न मम।** [स्त्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्र (अभावमें दोने अथवा मिट्टीके कसोरे)-में छोड़े।]

आगेकी तीन आहुतियाँ निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर दें—

---

*. द्विजेतरोंको 'ॐ' के स्थानपर ह्रीं तथा स्वाहाके स्थानपर 'नमः' लगाना चाहिये। जैसे—'ह्रीं प्रजापतये नमः; इदं प्रजापतये न मम।'

(२) **ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदं इन्द्राय न मम।** (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)
(३) **ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।** (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)
(४) **ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम।** (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)
तदनन्तर द्रव्यत्यागका संकल्प करे।

द्रव्यत्याग

होताके हाथमें जल देकर '**अस्मिन् होमकर्मणि याः याः यक्षमाणदेवताः ताभ्यः ताभ्यः इदं हवनीयद्रव्यं मया परित्यक्तं तत्सद्यथादैवतमस्तु न मम**'—इस प्रकार बोलकर जल छोड़ दे।

तदनन्तर वराहुति प्रदान करे—

वराहुति

विघ्नहर्ता भगवान् गणपति तथा देवी अम्बिकाके निमित्त दी गयी आहुति 'वराहुति' कहलाती है। वराहुतिके मन्त्र इस प्रकार हैं—

गणपतिके लिये—

ॐ गणानां त्वा गणपति ँ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति ँ हवामहे निधीनां त्वा निधिपति ँ हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥ स्वाहा॥

अम्बिकाके लिये—

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन।
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥ स्वाहा॥

नवग्रह-होम

यहाँ ग्रहोंके नाममन्त्रोंसे आहुतियाँ दी गयी हैं। नवग्रहोंकी आहुति शाकल्यसे[१] अथवा घीसे देनी चाहिये या दोनोंसे भी दी जा सकती है। शाकल्य मृगीमुद्रा[२]से ग्रहण करना चाहिये। आहुति 'स्वाहा' इस शब्दके उच्चारणके साथ देनी चाहिये। हवनके मन्त्र इस प्रकार हैं[३]—

(१) ॐ आदित्याय स्वाहा। (२) ॐ सोमाय स्वाहा। (३) ॐ भौमाय स्वाहा।
(४) ॐ बुधाय स्वाहा। (५) ॐ बृहस्पतये स्वाहा। (६) ॐ शुक्राय स्वाहा।
(७) ॐ शनैश्चराय स्वाहा। (८) ॐ राहवे स्वाहा। (९) ॐ केतवे स्वाहा।

नवग्रह-होमके अनन्तर भगवान् सत्यदेवके उद्देश्यसे हवन करना चाहिये।

---

१. (क) तिल, तिलका आधा चावल, चावलका आधा जौ, जौका आधा शर्करा तथा शर्कराका आधा घी मिलाकर बनाया गया हवनीय द्रव्य शाकल्य कहलाता है।

(ख) नवग्रहोंकी पृथक्-पृथक् समिधाएँ भी होती हैं। जैसे—सूर्यके लिये अर्क (मदार), चन्द्रके लिये—पलाश, भौम (मंगल)-के लिये—खदिर (खैर), बुधके लिये—अपामार्ग (चिचिड़ा), बृहस्पतिके लिये—पीपल, शुक्रके लिये—उदुम्बर (गूलर), शनैश्चर (शनि)-के लिये—शमी, राहुके लिये—दूर्वा तथा केतुके लिये—कुश। प्रादेशमात्र (अँगूठेसे तर्जनीके बीचकी दूरी) लम्बाईवाली इन समिधाओंको घीमें डुबोकर नवग्रहोंके लिये आहुति दी जाती है।

२. अनामिका, मध्यमा तथा अँगूठेको मिलाकर बनायी गयी मुद्रा 'मृगीमुद्रा' कहलाती है। इसी मुद्रासे शाकल्य ग्रहण करके उत्तान हाथसे आहुति देनी चाहिये।

३. यहाँ एक ही आहुति दी गयी है, सुविधाके अनुसार प्रत्येकके लिये ८—१० या अधिक आहुतियाँ दी जा सकती हैं।

प्रधान होम

सत्यनारायणकथा-कर्मके प्रधान देवता भगवान् श्रीसत्यनारायण देव हैं, अतः प्रथम उनके द्वादशाक्षर मन्त्र '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**' का कम-से-कम १०८ बार—एक माला अथवा समयके अनुकूल यथाशक्ति जप करके मन्त्रके साथ अन्तमें **स्वाहा** बोलकर जपका दशांश हवन करना चाहिये।* एक मालासे आहुति न हो सके तो कम-से-कम दस आहुतियाँ देनी ही चाहिये।

अग्निका उत्तर-पूजन तथा प्रार्थना

प्रधान हवनके अनन्तर हवनकी सफलताकी सिद्धिके लिये '**ॐ स्वाहास्वधायुताय बलवर्धननामाग्नये नमः**' इस मन्त्रसे अग्निदेवका गन्ध आदि उपचारसे संक्षेपमें उत्तर-पूजन करे।

तदनन्तर इस प्रकार प्रार्थना करे—

---

*. उत्तम पक्ष तो यह है कि किसी ब्राह्मणका मन्त्रके जपके लिये 'जापक' के रूपमें वरण कर लिया जाय। जितना जप हो उस जपके दसवें भागकी संख्यामें हवन करना चाहिये। यदि दस माला मन्त्र-जप हो तो एक मालासे हवन करना चाहिये या एक माला जप हो तो दसकी संख्यामें मन्त्राहुति देनी चाहिये। भगवान् सत्यनारायणका दूसरा मन्त्र भविष्यपुराण (अ० २५)-में इस प्रकार आया है, इससे भी जप किया जा सकता है और आहुति दी जा सकती है—

मन्त्र—'नमो भगवते नित्यं सत्यदेवाय धीमहि। चतुःपदार्थदात्रे च नमस्तुभ्यं नमो नमः'॥ स्वाहा॥

श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां बुद्धिं बलं श्रियम्।
आयुष्यं द्रव्यमारोग्यं देहि मे हव्यवाहन॥

इसके बाद '**ॐ अङ्गानि च मा आप्यायन्ताम्**' कहकर हाथोंसे अग्निदेवको अपने सम्पूर्ण शरीरमें धारण करनेकी भावना करे।

स्विष्टकृत् हवन

स्रुवामें घी रखकर दाहिना घुटना जमीनमें लगा निम्न मन्त्रसे आहुति दे।

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम। (शेष घृत प्रोक्षणीमें डाले।)

भूः आदि नव आहुतियाँ

प्रत्येक आहुतिके बाद स्रुवासे बचा घी प्रोक्षणीपात्रमें डाले।

(१) ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम। (२) ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

(३) ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम। (४) ॐ अग्नीवरुणाभ्यां स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

(५) ॐ अग्नीवरुणाभ्यां स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

(६) ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये अयसे न मम।

(७) ॐ वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च स्वाहा इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।

(८) ॐ वरुणायादित्यायादितये स्वाहा, इदं वरुणायादित्यादितये न मम।

(९) ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

अग्निप्रदक्षिणा तथा त्र्यायुष् धारण

तदनन्तर यजमान अग्निकी प्रदक्षिणा करे और आचार्य घृतयुक्त स्रुवासे घृतयुक्त भस्म ग्रहणकर अनामिका अँगुलीसे पहले स्वयं भस्म धारण करे, तदनन्तर श्रोताओंको त्र्यायुष् धारण कराये। त्र्यायुष् धारणकी विधि इस प्रकार है—

'ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः' कहकर ललाटमें, **'ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्'** कहकर कण्ठमें, **'ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्'** कहकर दक्षिण बाहुमूलमें और **'ॐ तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्'** कहकर हृदयमें त्र्यायुष् धारण करना चाहिये।

संस्रवप्राशन और दक्षिणादान

प्रोक्षणीपात्रके जलमें आहुतिसे बचा जो घृत छोड़ा गया है, उसको यजमान थोड़ा ग्रहण कर ले अथवा सूँघ ले, इसीका नाम संस्रवप्राशन है। तदनन्तर आचमन करे। आचार्य आदि ब्राह्मणोंको दक्षिणा तथा भूयसी दक्षिणा प्रदान करे। तदनन्तर भगवान् नारायणका उत्तर-पूजन करे।

* उत्तर-पूजन *

कथा-श्रवण तथा हवनके अनन्तर संक्षेपमें गन्धाक्षत-पुष्प आदि उपचारोंसे भगवान् श्रीसत्यनारायण तथा आवाहित देवताओंका उत्तर-पूजन करना चाहिये। पूजनके बाद आरती करनी चाहिये। तदनन्तर निम्न मन्त्रसे शंखका जल भगवान्पर घुमाकर भगवान्को निवेदित करे तथा अपने ऊपर और भक्तजनोंपर छोड़े; क्योंकि शास्त्रकी उक्ति है—

शङ्खमध्यस्थितं तोयं भ्रामितं केशवोपरि। अङ्गलग्नं मनुष्याणां ब्रह्महत्यां व्यपोहति॥

आरती

किसी स्वस्तिक आदि मांगलिक चिह्नोंसे अलंकृत तथा पुष्प-अक्षत आदिसे सुसज्जित थालीमें कपूर अथवा घृतकी बत्तीको प्रज्वलितकर जलसे प्रोक्षित कर ले। पुनः घण्टा-नाद करते हुए अपने स्थानपर खड़े होकर भगवान्की मंगलमय आरती करे। आरतीका यह मुख्य विधान है कि सर्वप्रथम चरणोंमें चार बार, नाभिमें दो बार, मुखमें एक बार आरती करनेके बाद पुनः समस्त अंगोंकी सात बार आरती करनी चाहिये।

आरती-मन्त्र—

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्। सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि॥

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्। आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव॥

❑ ❑

श्रीसत्यनारायणजीकी आरती

जय लक्ष्मीरमणा, श्रीलक्ष्मीरमणा। सत्यनारायण स्वामी जन-पातक-हरणा॥ जय०॥ टेक॥

रत्नजटित सिंहासन अद्भुत छबि राजै। नारद करत निराजन घंटा-ध्वनि बाजै॥ जय०॥

प्रकट भये कलि-कारण, द्विजको दरस दियो। बूढ़े ब्राह्मण बनकर कञ्चन-महल कियो॥ जय०॥

दुर्बल भील कठारो, जिनपर कृपा करी। चन्द्रचूड़ एक राजा, जिनकी बिपति हरी॥ जय०॥

वैश्य मनोरथ पायो, श्रद्धा तज दीन्हीं। सो फल भोग्यो प्रभुजी फिर अस्तुति कीन्हीं॥ जय०॥

भाव-भक्तिके कारण छिन-छिन रूप धर्‌यो। श्रद्धा धारण कीनी, तिनको काज सर्‌यो॥ जय०॥

ग्वाल-बाल सँग राजा वनमें भक्ति करी। मनवाञ्छित फल दीन्हों दीनदयालु हरी॥ जय०॥

चढ़त प्रसाद सवायो कदलीफल, मेवा। धूप-दीप-तुलसीसे राजी सत्यदेवा॥ जय०॥

(सत्य) नारायणजीकी आरति जो कोइ नर गावै। तन-मन-सुख-सम्पति मनवाञ्छित फल पावै॥ जय०॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। आरार्तिकं समर्पयामि। (कपूरसे आरती करे। आरतीके बाद जल गिरा दे।)*

स्तुति-प्रार्थना—तदनन्तर हाथ जोड़कर भगवान्‌की स्तुति करे—

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥
नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः॥

---

*. सुविधाके अनुसार कलशके जलसे यजमानका अभिषेक भी किया जा सकता है, उसकी विधि इस प्रकार है—

अभिषेक—आचार्य कलशके जलसे कुशों अथवा आम्रपल्लव आदिके द्वारा यजमान आदिका अभिषेक करे—पवित्र जलका छींटा डालता जाय। अभिषेकके समय पत्नीको पतिकी बायीं ओर बैठना चाहिये। अभिषेकके मन्त्र इस प्रकार हैं—

सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः। वासुदेवो जगन्नाथस्तथा सङ्कर्षणो विभुः॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते। आखण्डलोऽग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा॥

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः॥
आकाशात् पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्।
सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रति गच्छति॥
मूकं करोति वाचालं पङ्गुं लङ्घयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम्॥

वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः। ब्रह्मणा सहिताः सर्वे दिक्पालाः पान्तु ते सदा॥
कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रिया मतिः। बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्तिः कान्तिस्तुष्टिश्च मातरः॥
एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु देवपत्न्यः समागताः। आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुधजीवसिताऽर्कजाः॥
ग्रहास्त्वामभिषिञ्चन्तु राहुः केतुश्च तर्पिताः। देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः॥
ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च। देवपत्न्यो द्रुमा नागा दैत्याश्चाप्सरसां गणाः॥
अस्त्राणि सर्वशस्त्राणि राजानो वाहनानि च। औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये॥
सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः। एते त्वामभिषिञ्चन्तु धर्मकामार्थसिद्धये॥
अमृताभिषेकोऽस्तु। शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

पुष्पांजलि—हाथमें पुष्प लेकर इस प्रकार प्रार्थना करे—

नाना सुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर॥
कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्यात्मना वानुसृतस्वभावात्।
करोति यद्यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयेत्तत्॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि। (भगवान्‌को पुष्पांजलि समर्पित करे।)

प्रदक्षिणा— यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणपदे पदे॥

श्रीसत्यनारायणाय नमः। प्रदक्षिणां समर्पयामि। (भगवान्‌की प्रदक्षिणा करनेके बाद उन्हें साष्टांग प्रणाम करे, तदनन्तर क्षमा-प्रार्थना करे।)

क्षमा-प्रार्थना— मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं जनार्दन।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे॥

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः॥
यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर॥

विसर्जन—शालग्राम तथा घरमें प्रतिष्ठित देवोंको छोड़कर सभी आवाहित देवताओं तथा अग्निका निम्न मन्त्र-पाठपूर्वक अक्षत छोड़ते हुए विसर्जन करे—

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामिकाम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥
गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन॥
प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥

ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः *कहकर हाथ जोड़े तथा नमस्कार करे।*

रक्षाबन्धन-तिलक-आशीर्वाद—आचार्य यजमानके हाथमें रक्षासूत्र बाँधे, तिलक करे तथा आशीर्वाद प्रदान करे।

चरणामृत-ग्रहण—भगवान्‌का चरणोदक अति पुण्यप्रद और कल्याणकारी है। यह सभी पाप-तापोंका समूल उच्छेद कर देता है। अतः श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूजनके अन्तमें इसे सर्वप्रथम ग्रहण करना चाहिये। ग्रहण करते समय इसे भूमिपर न गिरने दे। अतः बायें हाथके ऊपर स्वच्छ दोहरा वस्त्र रखकर, उसपर दाहिना हाथ रखे तथा दाहिने हाथमें लेकर निम्न मन्त्र पढ़कर इसे ग्रहण करे—

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम्।
विष्णुपादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते॥

[चरणोदक ग्रहण करनेके बाद पंचामृत लेना चाहिये।]

तुलसीग्रहण—तदनन्तर भगवान् शालग्रामको अर्पित एवं भोग लगाया गया तुलसीदल निम्न मन्त्र पढ़कर लेना चाहिये—

पूजनानन्तरं विष्णोरर्पितं तुलसीदलम्।
भक्षयेद्देहशुद्ध्यर्थं चान्द्रायणशताधिकम्॥

प्रसाद-ग्रहण—अन्तमें भगवान्‌को भोग लगाये गये नैवेद्यको प्रसादरूपमें भक्तोंमें बाँटकर स्वयं भी ग्रहण करे।*

❑❑

* सत्यनारायणव्रत-कथाका प्रसाद अवश्य लेना चाहिये।

ॐ

श्रीपरमात्मने नमः

* अथ श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् *

यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात्। विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे॥
नमः समस्तभूतानामादिभूताय भूभृते। अनेकरूपरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे॥

वैशम्पायन उवाच

श्रुत्वा धर्मानशेषेण पावनानि च सर्वशः। युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरेवाभ्यभाषत॥ १ ॥

युधिष्ठिर उवाच

किमेकं दैवतं लोके किं वाप्येकं परायणम्। स्तुवन्तः कं कमर्चन्तः प्राप्नुयुर्मानवाः शुभम्॥ २ ॥
को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः। किं जपन्मुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात्॥ ३ ॥

भीष्म उवाच

जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम्। स्तुवन्नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः॥ ४ ॥
तमेव चार्चयन्नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम्। ध्यायन्स्तुवन्नमस्यंश्च यजमानस्तमेव च॥ ५ ॥
अनादिनिधनं विष्णुं सर्वलोकमहेश्वरम्। लोकाध्यक्षं स्तुवन्नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत्॥ ६ ॥
ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम्। लोकनाथं महद्भूतं सर्वभूतभवोद्भवम्॥ ७ ॥
एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः। यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा॥ ८ ॥
परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः। परमं यो महद्ब्रह्म परमं यः परायणम्॥ ९ ॥

पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलम्। दैवतं देवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता॥ १०॥
यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे। यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये॥ ११॥
तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपते। विष्णोर्नामसहस्रं मे शृणु पापभयापहम्॥ १२॥
यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः। ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये॥ १३॥
ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभुः। भूतकृद्भूतभृद्भावो भूतात्मा भूतभावनः॥ १४॥
पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः। अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च॥ १५॥
योगो योगविदां नेता प्रधानपुरुषेश्वरः। नारसिंहवपुः श्रीमान्केशवः पुरुषोत्तमः॥ १६॥
सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः। सम्भवो भावनो भर्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः॥ १७॥
स्वयम्भूः शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः। अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः॥ १८॥
अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः। विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः॥ १९॥
अग्राह्यः शाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः। प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मङ्गलं परम्॥ २०॥
ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः। हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदनः॥ २१॥
ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः। अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान्॥ २२॥
सुरेशः शरणं शर्म विश्वरेताः प्रजाभवः। अहः संवत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः॥ २३॥
अजः सर्वेश्वरः सिद्धः सिद्धिः सर्वादिरच्युतः। वृषाकपिरमेयात्मा सर्वयोगविनिःसृतः॥ २४॥
वसुर्वसुमनाः सत्यः समात्मा सम्मितः समः। अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः॥ २५॥
रुद्रो बहुशिरा बभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः। अमृतः शाश्वतस्थाणुर्वरारोहो महातपाः॥ २६॥

सर्वगः सर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः । वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित्कविः ॥ २७ ॥
लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः । चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः ॥ २८ ॥
भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः । अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥ २९ ॥
उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः । अतीन्द्रः संग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः ॥ ३० ॥
वेद्यो वैद्यः सदायोगी वीरहा माधवो मधुः । अतीन्द्रियो महामायो महोत्साहो महाबलः ॥ ३१ ॥
महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्तिर्महाद्युतिः । अनिर्देश्यवपुः श्रीमानमेयात्मा महाद्रिधृक् ॥ ३२ ॥
महेष्वासो महीभर्ता श्रीनिवासः सतां गतिः । अनिरुद्धः सुरानन्दो गोविन्दो गोविदां पतिः ॥ ३३ ॥
मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः । हिरण्यनाभः सुतपाः पद्मनाभः प्रजापतिः ॥ ३४ ॥
अमृत्युः सर्वदृक् सिंहः सन्धाता सन्धिमान्स्थिरः । अजो दुर्मर्षणः शास्ता विश्रुतात्मा सुरारिहा ॥ ३५ ॥
गुरुर्गुरुतमो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः । निमिषोऽनिमिषः स्रग्वी वाचस्पतिरुदारधीः ॥ ३६ ॥
अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान्न्यायो नेता समीरणः । सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ ३७ ॥
आवर्तनो निवृत्तात्मा संवृतः सम्प्रमर्दनः । अहः संवर्तको वह्निरनिलो धरणीधरः ॥ ३८ ॥
सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृग्विश्वभुग्विभुः । सत्कर्ता सत्कृतः साधुर्जह्नुर्नारायणो नरः ॥ ३९ ॥
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा विशिष्टः शिष्टकृच्छुचिः । सिद्धार्थः सिद्धसंकल्पः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः ॥ ४० ॥
वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदरः । वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः ॥ ४१ ॥
सुभुजो दुर्धरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो वसुः । नैकरूपो बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः ॥ ४२ ॥
ओजस्तेजोद्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापनः । ऋद्धः स्पष्टाक्षरो मन्त्रश्चन्द्रांशुर्भास्करद्युतिः ॥ ४३ ॥

अमृतांशूद्भवो भानुः शशबिन्दुः सुरेश्वरः। औषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मपराक्रमः ॥ ४४ ॥
भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः। कामहा कामकृत्कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः ॥ ४५ ॥
युगादिकृद्युगावर्तो नैकमायो महाशनः। अदृश्योऽव्यक्तरूपश्च सहस्रजिदनन्तजित् ॥ ४६ ॥
इष्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः शिखण्डी नहुषो वृषः। क्रोधहा क्रोधकृत्कर्ता विश्वबाहुर्महीधरः ॥ ४७ ॥
अच्युतः प्रथितः प्राणः प्राणदो वासवानुजः। अपां निधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः ॥ ४८ ॥
स्कन्दः स्कन्दधरो धुर्यो वरदो वायुवाहनः। वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरन्दरः ॥ ४९ ॥
अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः। अनुकूलः शतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः ॥ ५० ॥
पद्मनाभोऽरविन्दाक्षः पद्मगर्भः शरीरभृत्। महर्द्धिर्ऋद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः ॥ ५१ ॥
अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः। सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान्समितिञ्जयः ॥ ५२ ॥
विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः। महीधरो महाभागो वेगवानमिताशनः ॥ ५३ ॥
उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः। करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः ॥ ५४ ॥
व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो ध्रुवः। परर्द्धिः परमस्पष्टस्तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः ॥ ५५ ॥
रामो विरामो विरजो मार्गो नेयो नयोऽनयः। वीरः शक्तिमतां श्रेष्ठो धर्मो धर्मविदुत्तमः ॥ ५६ ॥
वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः प्रणवः पृथुः। हिरण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तो वायुरधोक्षजः ॥ ५७ ॥
ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः। उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः ॥ ५८ ॥
विस्तारः स्थावरस्थाणुः प्रमाणं बीजमव्ययम्। अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः ॥ ५९ ॥
अनिर्विण्णः स्थविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः। नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षमः क्षामः समीहनः ॥ ६० ॥

यज्ञ इज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः। सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम्॥ ६१॥
सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत्। मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः॥ ६२॥
स्वापनः स्ववशो व्यापी नैकात्मा नैककर्मकृत्। वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः॥ ६३॥
धर्मगुब्धर्मकृद्धर्मी सदसत्क्षरमक्षरम्। अविज्ञाता सहस्रांशुर्विधाता कृतलक्षणः॥ ६४॥
गभस्तिनेमिः सत्त्वस्थः सिंहो भूतमहेश्वरः। आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद्गुरुः॥ ६५॥
उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः। शरीरभूतभृद्भोक्ता कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः॥ ६६॥
सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित्पुरुसत्तमः। विनयो जयः सत्यसंधो दाशार्हः सात्वतां पतिः॥ ६७॥
जीवो विनयिता साक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः। अम्भोनिधिरनन्तात्मा महोदधिशयोऽन्तकः॥ ६८॥
अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोदनः। आनन्दो नन्दनो नन्दः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः॥ ६९॥
महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः। त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाशृङ्गः कृतान्तकृत्॥ ७०॥
महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी। गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः॥ ७१॥
वेधाः स्वाङ्गोऽजितः कृष्णो दृढः संकर्षणोऽच्युतः। वरुणो वारुणो वृक्षः पुष्कराक्षो महामनाः॥ ७२॥
भगवान् भगहानन्दी वनमाली हलायुधः। आदित्यो ज्योतिरादित्यः सहिष्णुर्गतिसत्तमः॥ ७३॥
सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः। दिविस्पृक्सर्वदृग्व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः॥ ७४॥
त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक्। संन्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठा शान्तिः परायणम्॥ ७५॥
शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः। गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः॥ ७६॥
अनिवर्ती निवृत्तात्मा संक्षेप्ता क्षेमकृच्छिवः। श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतां वरः॥ ७७॥

श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः। श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमाँल्लोकत्रयाश्रयः॥ ७८॥
स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिर्ज्योतिर्गणेश्वरः। विजितात्मा विधेयात्मा सत्कीर्तिश्छिन्नसंशयः॥ ७९॥
उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतस्थिरः। भूशयो भूषणो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः॥ ८०॥
अर्चिष्मानर्चितःकुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः। अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः॥ ८१॥
कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः। त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः॥ ८२॥
कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः। अनिर्देश्यवपुर्विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनंजयः॥ ८३॥
ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद्ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः। ब्रह्मविद्ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः॥ ८४॥
महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः। महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञो महाहविः॥ ८५॥
स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं स्तुतिः स्तोता रणप्रियः। पूर्णः पूरयिता पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः॥ ८६॥
मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः। वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हविः॥ ८७॥
सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्परायणः। शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः सुयामुनः॥ ८८॥
भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः। दर्पहा दर्पदो दृप्तो दुर्धरोऽथापराजितः॥ ८९॥
विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान्। अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्तिः शताननः॥ ९०॥
एको नैकः सवः कः किं यत्तत्पदमनुत्तमम्। लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः॥ ९१॥
सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी। वीरहा विषमः शून्यो घृताशीरचलश्चलः॥ ९२॥
अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोकधृक्। सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधा धराधरः॥ ९३॥
तेजोवृषो द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतां वरः। प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रो नैकशृङ्गो गदाग्रजः॥ ९४॥

चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः । चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात्॥ ९५ ॥
समावर्तोऽनिवृत्तात्मा दुर्जयो दुरतिक्रमः। दुर्लभो दुर्गमो दुर्गो दुरावासो दुरारिहा॥ ९६ ॥
शुभाङ्गो लोकसारङ्गः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः। इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः॥ ९७ ॥
उद्भवः सुन्दरः सुन्दो रत्ननाभः सुलोचनः। अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्जयी॥ ९८ ॥
सुवर्णबिन्दुरक्षोभ्यः सर्ववागीश्वरेश्वरः। महाह्रदो महागर्तो महाभूतो महानिधिः॥ ९९ ॥
कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः। अमृताशोऽमृतवपुः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः॥ १०० ॥
सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः। न्यग्रोधोदुम्बरोऽश्वत्थश्चाणूरान्ध्रनिषूदनः ॥ १०१ ॥
सहस्त्रार्चिः सप्तजिह्वः सप्तैधाः सप्तवाहनः। अमूर्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद्भयनाशनः॥ १०२ ॥
अणुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान्। अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंशवर्धनः॥ १०३ ॥
भारभृत्कथितो योगी योगीशः सर्वकामदः। आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः॥ १०४ ॥
धनुर्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः। अपराजितः सर्वसहो नियन्तानियमोऽयमः॥ १०५ ॥
सत्त्ववान्सात्त्विकः सत्यः सत्यधर्मपरायणः। अभिप्रायः प्रियार्होऽर्हः प्रियकृत्प्रीतिवर्धनः॥ १०६ ॥
विहायसगतिर्ज्योतिः सुरुचिर्हुतभुग्विभुः। रविर्विरोचनः सूर्यः सविता रविलोचनः॥ १०७ ॥
अनन्तो हुतभुग्भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः। अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः॥ १०८ ॥
सनात्सनातनतमः कपिलः कपिरप्ययः। स्वस्तिदः स्वस्तिकृत्स्वस्ति स्वस्तिभुक्स्वस्तिदक्षिणः॥ १०९ ॥
अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः। शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः॥ ११० ॥
अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणां वरः। विद्वत्तमो वीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः॥ १११ ॥

उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्ननाशनः । वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः ॥ ११२ ॥
अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः । चतुरस्रो गभीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः ॥ ११३ ॥
अनादिर्भूर्भुवो लक्ष्मीः सुवीरो रुचिराङ्गदः । जननो जनजन्मादिर्भीमो भीमपराक्रमः ॥ ११४ ॥
आधारनिलयोऽधाता पुष्पहासः प्रजागरः । ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः ॥ ११५ ॥
प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत्प्राणजीवनः । तत्त्वं तत्त्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः ॥ ११६ ॥
भूर्भुवःस्वस्तरुस्तारः सविता प्रपितामहः । यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः ॥ ११७ ॥
यज्ञभृद्यज्ञकृद्यज्ञी यज्ञभुग्यज्ञसाधनः । यज्ञान्तकृद्यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च ॥ ११८ ॥
आत्मयोनिः स्वयंजातो वैखानः सामगायनः । देवकीनन्दनः स्रष्टा क्षितीशः पापनाशनः ॥ ११९ ॥
शङ्खभृन्नन्दकी चक्री शार्ङ्गधन्वा गदाधरः । रथाङ्गपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः ॥ १२० ॥

॥ सर्वप्रहरणायुध ॐ नम इति ॥

इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्य महात्मनः । नाम्नां सहस्रं दिव्यानामशेषेण प्रकीर्तितम् ॥ १२१ ॥
य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत् । नाशुभं प्राप्नुयात्किञ्चित्सोऽमुत्रेह च मानवः ॥ १२२ ॥
वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात्क्षत्रियो विजयी भवेत् । वैश्यो धनसमृद्धः स्याच्छूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥ १२३ ॥
धर्मार्थी प्राप्नुयाद्धर्ममर्थार्थी चार्थमाप्नुयात् । कामानवाप्नुयात्कामी प्रजार्थी प्राप्नुयात्प्रजाम् ॥ १२४ ॥
भक्तिमान्यः सदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः । सहस्रं वासुदेवस्य नाम्नामेतत्प्रकीर्तयेत् ॥ १२५ ॥
यशः प्राप्नोति विपुलं ज्ञातिप्राधान्यमेव च । अचलां श्रियमाप्नोति श्रेयः प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥ १२६ ॥
न भयं क्वचिदाप्नोति वीर्यं तेजश्च विन्दति । भवत्यरोगो द्युतिमान्बलरूपगुणान्वितः ॥ १२७ ॥

रोगार्तो मुच्यते रोगाद्बद्धो मुच्येत बन्धनात् । भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतापन्न आपदः ॥ १२८ ॥
दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषः पुरुषोत्तमम् । स्तुवन्नामसहस्रेण नित्यं भक्तिसमन्वितः ॥ १२९ ॥
वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः । सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम् ॥ १३० ॥
न वासुदेवभक्तानामशुभं विद्यते क्वचित् । जन्ममृत्युजराव्याधिभयं नैवोपजायते ॥ १३१ ॥
इमं स्तवमधीयानः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः । युज्येतात्मसुखक्षान्तिश्रीधृतिस्मृतिकीर्तिभिः ॥ १३२ ॥
न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः । भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥ १३३ ॥
द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्रा खं दिशो भूर्महोदधिः । वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः ॥ १३४ ॥
ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम् । जगद्वशे वर्ततेदं कृष्णस्य सचराचरम् ॥ १३५ ॥
इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः । वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्रं क्षेत्रज्ञ एव च ॥ १३६ ॥
सर्वागमानामाचारः प्रथमं परिकल्पते । आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः ॥ १३७ ॥
ऋषयः पितरो देवा महाभूतानि धातवः । जङ्गमाजङ्गमं चेदं जगन्नारायणोद्भवम् ॥ १३८ ॥
योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्याः शिल्पादि कर्म च । वेदाः शास्त्राणि विज्ञानमेतत्सर्वं जनार्दनात् ॥ १३९ ॥
एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः । त्रींल्लोकान्व्याप्य भूतात्मा भुङ्क्ते विश्वभुगव्ययः ॥ १४० ॥
इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम् । पठेद्य इच्छेत्पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च ॥ १४१ ॥
विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभवाप्ययम् । भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यान्ति पराभवम् ॥ १४२ ॥

ॐ तत्सदिति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यामानुशासनिके पर्वणि भीष्मयुधिष्ठिरसंवादे श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रम् ॥

हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत्